चन्दामामा
दीपावली
8

Photo by B. Ranganathan

पुरस्कृत परिचयोक्ति

"क्यों रूठे हो दीवाली पर;
मेरी भाँति हँसो - हँसाओ!"

प्रेषक :
श्री सत्य स्वरूप दत्त, मेरठ

चन्दामामा

नवम्बर १९५६

सम्पादकीय १
कर्मफल (जातक कथा) ... ३
भयंकर देश-१६ (धारावाहिक) ९
नाविक सिन्दबाद (धारावाहिक) १७
बाजीगर की भक्ति ... २३
मित्र-भेद (पद्य कथा) ... २७
पोते का मोह ... ३०
भुवन सुन्दरी (धारावाहिक)... ३३
कादम्बरी ५१
सर्पराज ... ५३
असफल साधना (बेताल कथा) ५८
कीड़े-मकोड़े ६०
दीप जल उठे ... ६८
बड़ा कौन है? ७१
जादू के प्रयोग ७६
चित्र-कथा ८०

अब शान से चल रहा है।
बम्बई, कलकत्ता, सी.पी.सी.आइ. और हैदराबाद के प्रमुख केन्द्रों में।
एवीएम
चोरी चोरी
संगीत: शंकर-जयकिशन
दिग्दर्शन: अनन्त ठाकुर
नवम्बर में :
दिल्ली - पूर्व पंजाब
और दक्षिण भारत
में प्रदर्शित होगा।
AVM
PRODUCTIONS

सदियों से प्रचलित छुआछूत के इस पाप का प्रायश्चित करने का केवल एक ही मार्ग है — हरिजनों की बस्तियों में जाइए, उन्हें स्नेह से अपनाइये। अपने बच्चों के समान उनके बच्चों को भी प्यार से गले लगाइये। उनके कल्याण में रुचि दिखाइये। आपके समान उनको भी अधिकार है कि उन्हें पर्याप्त भोजन, शुद्ध जल, ताजी हवा और आवश्यक प्रकाश जैसी सुविधाएँ सुलभ हों।

— "महात्मा गांधी"

हरिजनों के प्रति अपना कर्तव्य याद रखिए।

ग्राहकों को एक ज़रूरी सूचना !

ग्राहकों को पत्र-व्यवहार में अपनी ग्राहक-संख्या का उल्लेख अवश्य करना चाहिये। जिन पत्रों में ग्राहक-संख्या का उल्लेख न होगा, उन पर कोई ध्यान नहीं दिया जा सकेगा। पता बदल जाने पर तुरन्त नए पते की सूचना देनी चाहिए। यदि प्रति न मिले तो १० वी तारीख से पहले ही सूचित कर देना चाहिए। बाद में आनेवाली शिकायतों पर कोई ध्यान नहीं दिया जाएगा।

व्यवस्थापक, "चन्दामामा."

माताओं का घनिष्ठ मित्र
डाक्टर के पास
लिटिल्स
ओरियण्टल बाम

दी इण्डियन ओवरसीज़ बैंक लिमिटेड

केन्द्रकार्यालय : मद्रास.

सभापति : **एम. सीटी. मुत्तय्या जी**

जनरल मैनेजर : **सी. पी. दोरैकनु जी**

असिस्टेंट जनरल मैनेजर :

राय साहब एस. आर. वी. अरसु, पी. ई. ब्रासर्स जी,
जी. लक्ष्मीनारायण जी

शाखाएं : **भारत में।**

एलप्पी, बेंगलोर सिटी, बम्बई-फोर्ट, बम्बई-मांडवी, कलकत्ता, कणनोर, कोचीन, कोयम्बतूर, देवकोटा, गुन्टूर, हैदराबाद (दक्षिण) कारैकाल, कारैकुडी, कोल्लसावलपट्टी, कोज़िकोड, कुम्भकोणम, मद्रास माउण्टरोड (मद्रास) त्यागरायनगर (मद्रास) मंगलोर, मदुरै, मायूरम, मैसूर, नागपट्टिणम, पेरम्बलूर, पांडिचेरी, पुदुकोटै, पुदुप्पट्टि, क्वेइलोन, सेलम, शियाली, शिवगंगा, शिवकाशी, तंजाऊर, तिरुनेल्वेली टाउन, तिरुवारूर, तिरुचिरापल्ली, तूतिकोरिन, त्रिवेंद्रम.

अन्य शाखाएं : **कुत्तानल्लूर, कुत्तालम**

नई दिल्ली की शाखा शीघ्र ही खोली जाएगी।

शाखाएं : **विदेशों में।**

बर्मा - रंगून ; सिलोन - कोलम्बो ; मलाया - आइपो, कुआलालम्पूर, मलक्का, पेनांग, सिंगापूर ; थाईलैंड - बैंकॉक ; हांगकांग।

प्रमुख केन्द्रों के विदेशी प्रतिनिधि :

बैंक के विदेशी विभाग की सेवाएं सभी निर्यातकों को प्राप्त होंगी। संसार के सभी मुख्य केन्द्रों के साथ आप सीधे संबंध स्थापित कर सकते हैं। हम सभी प्रकार के विदेशी व्यापार को शीघ्रता से करा सकेंगे और संसार के सभी विदेशी आयात-निर्यात करनेवाली संस्थाओं के साथ निर्यातकों का संबंध स्थापित करने में मदद पहुंचायेंगे।

BISCUITS

इनर्जी फूड बिस्कुट ताजे, स्वादिष्ट और विटामिनों से भरपूर होते हैं और बच्चों को तन्दुरुस्त और ताकतवर बनाते हैं।

दूध, ग्लूकोज़, माल्ट आदि से बनाए हुए। विटामिनों से भरपूर।

जे. बी. मंघाराम ऐण्ड कम्पनी, ग्वालियर.

चन्दामामा

संचालक : चक्रपाणी

फिर दीवाली आ गई, इतनी जल्दी और इतनी सजधज कर। लगता है, जैसे कल ही पिछले वर्ष की दीवाली मनाई हो, और इस बीच बारह महीने गुजर भी गये।

हिन्दू समाज में त्यौहार अपनी विशेषता रखते हैं, और त्यौहारों की दीवाली ही सचमुच सिरमौर है। दीवाली सभी के लिए पुण्य पर्व है, भले ही हरेक के लिए भिन्न भिन्न कारण हों।

दीपावली के बारे में कई कहानियाँ सदियों से प्रचलित हैं। उनमें से कई, समय समय पर "चन्दामामा" में दी जा चुकी हैं। सभी कहानियों और परम्परा से यह स्पष्ट है कि यह एक विजयोत्सव है और विजयोत्सव के मनाने में कौन सन्तुष्ट और सुखी नहीं होता? लक्ष्मी के आराधकों के लिए दीपावली का विशेष महत्व है।

"चन्दामामा" का विशेषांक आपके हाथों में है। इसका कलेवर बढ़ गया है। कई नई कहानियाँ दी गयी हैं। हम आशा करते हैं कि यह आपके आदर का पात्र हो सकेगा।

अंक : २

नवम्बर १९५६

वर्ष : ८

शुतुर्मुर्ग भी दीवाली मनाता है!

कर्मफल

भगवान बुद्ध के समय में अनाथ पिंडक नाम का एक उत्तम वैश्य रहा करता था। बुद्ध के प्रति उसकी अगाध भक्ति थी। उनके जेतवन में उसने चौवन करोड़ रुपये की लागत से एक विहार बनवाया था। वह दिन में तीन बार नियमित रूपसे उनके दर्शन कर आता था। कभी कभी बुद्ध भी अपने अनुयायियों के साथ उसके घर भिक्षा के लिये आया करते थे।

अनाथ पिंडक का मकान सतमंजला था। उसके सात प्राकार थे। बीच के प्राकार में एक क्षुद्र देवी अपनी सन्तान के साथ रहा करती थी। उसे बुद्ध का कभी कभी उस घर में आना कतई पसन्द न था। वह स्त्री का रूप धारण कर अनाथ पिंडक के खजान्ची के पास गई। उससे कहा—"इस घर में बुद्ध को क्यों आने देते हो! उन जैसों का घर में पैर रखना भी बुरा है।" खजांची ने उसे डांट-डपटकर भेज दिया। फिर वह अनाथ पिंडक के पुत्र के पास गई। उससे भी वही कहा। उसने भी उसे डांट बताई। वह चुप रह गई।

अनाथ पिंडक का दिन प्रति दिन व्यय बढ़ता गया और आय घटती गई। उसे व्यापार देखने की न फुरसत थी, न दिलचस्पी ही थी। यही नहीं उसे अन्यत्र भी नुक़सान हुआ। साथ के व्यापारियों ने उसके पास से १४ करोड़ रुपये उधार लिये पर उन्होंने उन रुपयों को वापिस नहीं दिया। और १४ करोड़ रुपया अचिरवती नदी के किनारे कलशों में गाड़ रखा था।

नदी में बाढ़ आई। किनारे टूटे और कलश समुद्र में बह गये।

इन सब कारणों के फल स्वरूप अनाथ पिंडक गरीब होने लगा। वह भिक्षुओं को दावत तो देता था, पर दावतें पहिले की तरह न होती थीं।

एक बार बुद्ध भगवान ने अनाथ पिंडक से पूछा—"क्या अब भी दान कर रहे हो?" अनाथ पिंडक ने बड़े खेद के साथ कहा—"स्वामी! दान में केवल चावल का मांड ही दे पाता हूँ।" महात्मा बुद्ध ने उसका दुःख देखकर उसको आश्वासन दिया—"चिन्ता मत करो। जब तक चित्त शुद्ध है, चाहे दान भले ही मांड़ हो, पर वह भी अच्छा है।"

अनाथ पिंडक अब गरीब हो गया था। इसलिये क्षुद्र देवी ने हिम्मत कर उसके पास जाकर कहा—"क्यों भाई! इस बुद्ध को क्यों यहां आने देते हो? उसकी फिक्र छोड़ आराम से तुम अपना व्यापार करो। मैं तुम्हारे चौथे प्राकार में रहनेवाली देवी हूँ। मैं तुम्हारे हित को ही कह रही हूँ।"

अनाथ पिंडक ने उससे कहा—"तुम तुरत मेरा घर छोड़कर चली जाओ।"

"जाऊँगी! नहीं तो क्या मैं यहां बैठी रहूँगी! इससे अच्छे घर मिल जायेंगे।" कहती हुई वह क्षुद्र देवी, बाल-बच्चों को साथ ले, पिंड़क का घर छोड़कर चली गई। परन्तु उसके बहुत ढूँढने पर भी उतना अच्छा घर कहीं न मिला। वह पछताने भी लगी कि क्यों वह उतना अच्छा घर छोड़ आई थी। पर जो घर छोड़ आई थी, उस घर में फिर किस मुँह से जाती! इसलिये वह ग्राम देवता के पास सलाह लेने गई।

"तेरी ही गल्ती है कि वह घर छोड़कर चली आई। अगर तू वहां वापिस जाना चाहती है तो एक काम कर। व्यापारियों को १८ करोड़ रुपये अनाथ पिंड़क को देने हैं। तू अनाथ पिंड़क के तकाज़ाई की हैसियत से उस रुपये को वसूल कर। १८ करोड़ रुपये से भरे धन कलश भी समुद्र के हवाले हो गये हैं। तू उन्हें भी खोजकर ला। फलानी जगह १८ करोड़ रुपये की सम्पत्ति है, जो अनाथ पिंड़क की है। यह कोई नहीं जानता। उस सम्पत्ति को भी उन्हें दिला। फिर उनके पास जाकर क्षमा माँग और प्रार्थना कर कि वे फिर तुझे अपने घर में रहने

दें।"—ग्राम देवता ने यह सलाह दी। उसकी सलाह के मुताबिक क्षुद्र देवता ने १८ करोड़ रुपये का कर्ज़ वसूल किया। वह समुद्र में से धन-कलश खोज कर लाई। १८ करोड़ रुपये की सम्पत्ति भी उन्हें दिलवाई और उनसे कहा—"हुज़ूर! मुझे क्षमा कीजिये। मुझे अपने घर में रहने दीजिये।"

"क्षमा तुम बुद्ध भगवान के पास जाकर माँगो।"—अनाथ पिंडक ने क्षुद्र देवता से कहा। वह अनाथ पिंडक के साथ जेतवन गई और बुद्ध के सामने सब कुछ सुनाकर उसने क्षमा माँगी।

तब बुद्ध भगवान ने कहा—

"दुष्कर्म करनेवाला, जब तक उसका कर्म पूरा नहीं होता, तब तक यही सोचता है कि अच्छा काम कर रहा है। जब फल भुगतना पड़ता है, तब उसको असलियत मालूम होती है। इसी प्रकार सत्कर्म करनेवाला भी जब तक उसका कर्म पूरा नहीं होता, यह सोचता है कि वह दुष्कर्म कर रहा है। फल भुगतने पर उसे सचाई मालूम होती है। पहिली बात के लिए यह क्षुद्र देवी उदाहरण है। यह सोचती रही कि वह बहुत अच्छा काम कर रही थी। और दूसरी बात का उदाहरण अनाथ पिंडक है। यह सोच रहा था कि वह कोई दुष्कर्म कर रहा था। कर्म के पूरा होने पर ही ज्ञात हुआ कि कौन दुष्कर्म कर रहा था और कौन सत्कर्म।"

यह सुन क्षुद्र देवी की बुद्धि ठिकाने आई। भगवान बुद्ध से उसने द्वेष करना छोड़ दिया। बाल-बच्चों को लेकर, अनाथ पिंडक के घर के चौथे प्राकार में, यथापूर्व अपना उसने बसेरा बना लिया।

दीवाली के दीप जलाएँ !

श्री श्रीकृष्ण शर्मा, सिक्खपुरी (भोपाल)

दीवाली के दीप जलाएँ !
उजियाले का पर्व मनाएँ !!

जलकर दीपक - पाँति निरन्तर,
ज्योतित करती तम का अन्तर;
जन - मन में हम दीप जलाकर,
आओ जग - जीवन चमकाएँ !!

यह माटी के लघु - लघु दीपक,
स्नेह - ज्योति से लगते मोहक;
दीपक - हास बिखेर अधर से,
हम भी सब के प्रिय बन जायें !!

नभ के यह अनगिनती तारे,
भू का तम हरने में हारे;
उनसे तो यह दीप भले हैं,
इनमें ही सौ चाँद उगाएँ !!

दीपक जलकर झिलमिल - झिलमिल,
दीपक जलकर हिलमिल - हिलमिल;
हमें सिखाते हैं यह बच्चो,
सबको अपने गले लगाएँ !!

दीवाली के दीप जलाएँ !
उजियाले का पर्व मनाएँ !!

घाटी से बाहर निकल पाये हैं! नहीं तो वहाँ से आना आदमी के बस में नहीं है" यह देख कि मैं भूख के कारण कांटा हो रहा था, वे मुझ पर दया कर अपने तम्बुओं में ले गये, और वहाँ मुझे उन्होंने खाना खिलाया-पिलाया। तम्बू में मैं एक रात और एक दिन सोता रहा।

अगले दिन, हम सब मिलकर पहाड़ों से उतरकर समुद्र के किनारे गये। वहाँ से नौकाओं में बैठकर कपूर द्वीप में गये। वहाँ बड़े बड़े कपूर के पेड़ थे। कड़ी से कड़ी धूप में भी उन पेड़ों के नीचे ठण्ड रहती थी। एक एक पेड़ के नीचे सौ सौ आदमी एक साथ आराम कर सकते थे। इन पेड़ों की खाल उतार दी जाती है। और जब उनमें से रस टपकता है तो उस रस को इकट्ठा कर उसमें से कपूर निकाला जाता है।

मैंने इस द्वीप में एक बड़ा हरिण देखा। होने को तो वह खड्गमृग की जाति का था; पर वह उससे कहीं अधिक बड़ा था। वह ऊँट से भी बड़ा होता है। उसके सिर पर दस फुट लम्बे सींग होते हैं। वह साधारण रूप से घास वगैरह चरता रहता

[१६]

[जब ढोलक सुनकर शिवदत्त और उसके सैनिक समुद्र के किनारे गये तो उन्हें समुद्री डाकुओं का सरदार समुद्रकेतु दिखाई दिया। उससे बचकर दो स्त्रियाँ जंगल में भागी जा रही थीं। उनके पीछे आते हुए समुद्रकेतु का शिवदत्त ने मुकाबला किया। बाद में—]

शिवदत्त और उसके सैनिकों के झाड़ियों के पीछे भाग जाने के बाद, समुद्र के किनारे पर दो किश्तियाँ लगीं और उनमें से शोर करते हुए कुछ समुद्री डाकू उतरे। समुद्रकेतु बुरी तरह थक गया था। वह हाँफ रहा था। तलवार को रेत में रगड़ते हुए उसने पूछा—"तुम सब अब तक क्या कर रहे थे! वे पेड़ों की आड़ में भाग गये हैं—।" वह उन पर गुस्सा करने लगा। फिर उस तरफ़ इशारा करते हुए जिस तरफ़ स्त्रियाँ भाग गईं थीं, उसने आज्ञा दी—"सिर्फ़ यहाँ बीस आदमी रहें। बाकी सब जाकर उन स्त्रियों को खोजकर पकड़ लाओ।"

तुरन्त हड़बड़ाते हुए समुद्री डाकू जंगल की ओर भागे। समुद्रकेतु की आज्ञा शिवदत्त के कानों में भी पड़ी। वह अपने सैनिकों के साथ घनी झाड़ियों के पीछे खड़ा खड़ा यह सब देख रहा था।

"शिवदत्त! अब हमें क्या करना चाहिये! अगर हम यूँही देखते खड़े रहे

तो ये समुद्री डाकू फिर स्त्रियों को पकड़ कर ले जायेंगे।"—मन्दरदेव ने कहा। शिवदत्त लाचार था। उसने सिर हिलाकर कहा—"इस हालत में हम कुछ भी नहीं कर सकते हैं। अगर हम आठ आदमियों ने इन असंख्य समुद्री डाकुओं से मुकाबला किया तो हमारा सर्वनाश हो जाएगा। अब तक वे स्त्रियाँ दूर कहीं भाग-भगाकर कहीं छुप-छुपा गई होंगी।"

आध घंटा बीत गया। जंगल डाकुओं के होहल्ले से गूँज रहा था। उनका शोर सुनाई पड़ रहा था। थोड़ी देर बाद उन्होंने समुद्रकेतु के पास आकर कहा—"हुज़ूर! वह बुढ़िया तो दिखाई नहीं दी, हम इसे पकड़ लाये हैं।" उन्होंने एक बड़ी सुन्दर लड़की को उसके सामने पेश किया।

"अ हह ह...." समुद्रकेतु ने अट्टहास करके कहा—"इसमें तो पैसा नहीं दिखायेगी। उस बुढ़िया पर तो फ़ालतू खिलाने-पिलाने का ही खर्च होगा। चलो अब नावों पर चढ़ें।" पीछे की ओर मुड़कर फिर उसने गुस्से में कहा—"हाँ! जो लोग यहाँ नये आये हैं उन्हें तुमने पहिचान लिया है न! इस जगह को भी मत भूलना। मौका मिलने पर, फिर आकर उनका शिकार करेंगे।"

समुद्रकेतु की चारों नावें किनारे से अन्दर की ओर जाने लगीं। शिवदत्त ने उन नावों की ओर कुछ देर तक देखकर कहा—"हम फ़िलहाल तो कुछ कर नहीं सकते। खाना ही खतम करें; आओ, चलें" वह अभी कह ही रहा था कि दूरी पर किसी स्त्री के रोने की आवाज़ सुनाई दी।

शिवदत्त को अचरज हुआ। उसने मन्दरदेव की ओर देखा, फिर उस तरफ़ चल दिया, जिस तरफ़ से रोने की आवाज़

आ रही थी। सैनिक भी उसकी देखा देखी उसके पीछे चलने लगे।

शिवदत्त अपने सैनिकों के साथ थोड़ी देर में उस स्त्री के पास पहुँचा। वह और कोई स्त्री न थी—वही थी, जो एक और स्त्री के साथ, समुद्रकेतु के चँगुल में से भाग निकली थी। शिवदत्त ने उसके पास जाकर पूछा—"माई, तुम कौन हो! तुम्हारा नाम क्या है! किस देश की रहनेवाली हो!"

वह स्त्री शिवदत्त के प्रश्न सुनते ही, घबराकर, उसकी ओर देखने लगी। वह भयभीत हो गई। यह देख शिवदत्त ने कहा—"हमारी वजह से तुम्हारी कोई हानि न होगी। तुम्हारा एक और स्त्री के साथ समुद्रकेतु के चुँगल से भाग निकलना हमने देखा है। मेरे पास आठ सैनिक से अधिक नहीं हैं। इनको लेकर, साठ डाकुओं से लोहा लेना खतरा मोल लेना है; यह सोच हमने मैदान छोड़ दिया।"

"मगर अफ़सोस कि स्वयंप्रभा को वे लोग फिर पकड़ करके ले गये हैं।" कहती कहती वह स्त्री ज़ोर ज़ोर से बिलखने लगी; रोने-पीटने लगी।

शिवदत्त, उसका दुःख कम करने के लिए, उसे दिलासा दिलाने लगा और यह बताने के लिए कि वह उसकी मदद भी कर सकता है उसने उसको अपना सारा किस्सा सुना दिया। कहानी सुनकर उस स्त्री ने रोना बन्द कर दिया और कहा—"हुज़ूर, मेरा नाम देवमाया है। मैं दमन द्वीप की रहनेवाली हूँ। दस-बारह वर्ष पहिले मुझे इस समुद्रकेतु ने कैदी बना लिया था। तब से मैं उसके नीचे गुलाम की तरह जी रही हूँ। अब वह जिस लड़की को पकड़कर ले गया है,

उसका नाम स्वयंप्रभा है। ज़ालिम बार दिन पहिले ही उसको श्रमन द्वीप के किनारे से पकड़ कर लाया था! वह बिचारी वहाँ जल-विहार कर रही थी।"

"तो यानि तुम दस-बरस से उस समुद्र केतु के पास कैदी होकर रह रही हो। तो तुम उस दुष्ट के बारे में सब कुछ जानती होगी!"—शिवदत्त ने कहा।

देवमाया ने सिर हिलाकर कहा—"हुज़ूर, मैं उसके बारे में सब कुछ जानती हूँ। इस द्वीप के पश्चिम दिशा में "मकर मण्डल" नाम का एक पहाड़ी इलाका है। वहाँ पहुँचने के लिए एक ही एक रास्ता है। वहाँ कई जगह समुद्र के पानी की झीलें हैं। ऐसी एक झील के एक द्वीप में वह समुद्रकेतु रहता है।"

"तो इसका मतलब यह हुआ कि वह दुष्ट स्वयंप्रभा को वहाँ ले गया होगा। उस मकरमण्डल के रहनेवाले आदमी कैसे हैं? क्या वे लोग सभ्य हैं या जँगली?"—शिवदत्त ने पूछा।

"उस मकरमण्डल के निवासी कतई असभ्य नहीं हैं। वे छोटे छोटे गाँवों में रहते हैं। शिकार करके वे जिन्दगी गुज़र

करते हैं। उनका एक राजा भी है। परन्तु पाँच-छः वर्षों से उस इलाके में अराजकता फैली हुई है। इसकी वजह यह है कि मकरमण्डल के एक पहाड़ी झील में एक मगर ने अपना निवास बना लिया है"—देवमाया ने कहा।

"अरे! एक मगर की वजह से! भले ही वह कितना बड़ा हो, मकर-मण्डल के सारे लोग उससे डर रहे हैं! अजीब बात है।"—शिवदत्त ने कहा।

"हुजूर! यह मामूली मगर नहीं है!" देवमाया ने कहा। बदसूरत वज्रमुष्टि की ओर डरते हुए देखकर उसने कहा—"सुना जाता है कि उस मगर के पास कई पैशाचिक शक्तियाँ हैं। उसको वे लोग "मकर देवता" कहकर पुकारते हैं। उसके आहार के लिए, रोज वे लोग दो-तीन आदमियों की बलि देते हैं। यह काम मकरमण्डल का राजा हरिशिल स्वयं करता है। बलि के लिए आदमियों को यह समुद्रकेतु उसे बेचता रहता है।"

"तो ऐसी बात है!"—शिवदत्त ने मन्दरदेव की ओर देखते हुए कहा—"यह समुद्रकेतु हरिशिल के पास से पैसा

ऐंठने के लिए इस तरह बिचारे लोगों को ज़ोर-ज़बरदस्ती करके पकड़कर ले जाता रहता है! यही न!"

"मैं उस मगर को मार सकता हूँ। यदि आप अनुमति दें तो मैं अभी मकरमण्डल के लिए रवाना होता हूँ।" वज्रमुष्टि ने शिवदत्त की ओर देखकर कहा।

वज्रमुष्टि के यह कहते ही देवमाया का मुँह सन्तोष से खिल-सा उठा। उसने वज्रमुष्टि की ओर स्नेह से देखकर कहा—"दो बरस पहिले मकरमण्डल की एक स्त्री ने देवी के प्रभाव से भविष्य में होने वाली एक घटना के बारे में कहा था—"तीन-चार फुट का एक बदसूरत व्यक्ति जल्दी ही मकरमण्डल में आयेगा। उसी के हाथ यह मगर मारा जाएगा और उसके बाद मकरमण्डल सर्व सम्पदाओं से सम्पन्न हो जाएगा।" देवमाया ने बताया।

देवमाया की बात सुनकर शिवदत्त हँसा। फिर उसने वज्रमुष्टि से कहा—"शायद वह बदसूरत व्यक्ति वज्रमुष्टि हो। अगर तुम उस मकरमण्डल का रास्ता दिखाओगी तो हम भी वहाँ चलेंगे।"

"रास्ते में समुद्रकेतु का घर है। उससे बचकर आगे जाना असम्भव है।" देवमाया ने काँपते हुए कहा।

"सम्भव और असम्भव की बात तो हम देख लेंगे। स्वर्णरमा भी अब उस दुष्ट के हाथों में होगी।" मन्दरदेव ने गुस्से में कहा।

"हाँ! उसे भी समुद्रकेतु मकर देवता को बलि देने के लिए बेचने की सोच रहा है, यह मैं जानती हूँ। खूबसूरत जवान लड़कियों और लड़कों के लिए हरिशिख अधिक धन देता है। समुद्रकेतु समुद्र के किनारे उनको ढूँढ़ता फिरता है।" देवमाया ने काँपते काँपते कहा।

शिवदत्त उसकी बात सुनकर कुछ देर तक सोचता रहा। फिर उसने कहा—"देवमाया! जैसे हम से बन सकेगा हम स्वयंप्रभा की रक्षा करेंगे। उस दुष्ट समुद्रकेतु का सर्वनाश करके ही हम दम लेंगे।"

मन्दरदेव ने भी सिर हिलाकर अपनी राय प्रकट की। वह उससे सहमत था। तब शिवदत्त ने अपने सैनिकों की ओर मुड़कर कहा—"पहिले भोजन कर लिया जाय, फिर मकरमण्डल की ओर चलेंगे। देरी नहीं होनी चाहिये।"

सैनिक भी इसके लिए तैयार हो गये। देवमाया के साथ वे उस जगह पहुँचे, जहाँ वे अपना भोजन अधूरा छोड़ आये थे और जल्दी खाने-पीने से निवृत्त हो गये। तब तक सूर्य ठीक सिर पर चढ़ आया था। कड़ी धूप हो रही थी। थोड़ी देर आराम करके शिवदत्त ने कहा—"चलो, अब चलें! दिन ढल जाने से पहिले यह मालूम करना होगा कि समुद्रकेतु कहाँ रहता है।"

थोड़ी देर में सब जाने के लिए तैयार हो गये। द्वीप के पश्चिम में स्थित समुद्रकेतु के निवास-स्थान का मार्ग क्योंकि देवमाया को ही मालूम था, इसलिये उसे

रास्ता दिखाने का भार सौंपा गया। शिवदत्त और मन्दरदेव उसके आगे पीछे चल रहे थे।

जिस रास्ते से वे जा रहे थे वह कतई निर्जन था। न कहीं कोई पदचिन्ह दिखाई देते थे और न कोई घर वगैरह ही आस-पास थे। बड़े बड़े पेड़ों का घना जंगल था। तनों पर बेलें लटकी हुई थीं। घास भी बड़ी थी। इसलिये कड़ी दुपहरी में भी वहाँ अन्धेरा था। उन्हें वहाँ बड़े बड़े हिंस्र जन्तु दिखाई दिये। कई जगह तो बड़े बड़े अजगर पेड़ों से लटक रहे थे। उनसे

बड़ी होशियारी से हटकर आगे बढ़ना पड़ रहा था, कहीं ऐसा न हो कि वे उनके शिकार बन जायें।

सूर्यास्त होने से थोड़ी देर पहिले, सब से आगे बढ़कर वज्रमुष्टि एक बड़े पेड़ पर चढ़ गया। उसको क़रीब एक मील की दूरी पर समुद्र के पानी की झीलें और उनके द्वीप दिखाई दिये। एक जगह उसको मनुष्यों का जमघट भी दिखाई दिया।

वज्रमुष्टि तुरत पेड़ से उतर आया। उसने शिवदत्त के पास जाकर कहा—"हुज़ूर! समुद्रकेतु के निवास-स्थान, जहाँ हमें देवमाया ले जा रही है; यहाँ से बहुत दूर नहीं है। पेड़ पर चढ़कर देखने से पता लगता है कि एक झील साँप की तरह मुड़ गई है वहाँ एक द्वीप भी है। उसमें एक जगह कई आदमी इकट्ठे हुए हैं। हो सकता है कि वे समुद्रकेतु के दल के लोग हों।"

"अगर यह बात है तो यह अच्छा नहीं कि हम सब एक साथ ही उस जगह पहुँचें। तुम, दो-चार आदमियों को लेकर पहिले वहाँ जाओ और वहाँ के हालचाल मालूम करके आओ।"

शिवदत्त की आज्ञा के अनुसार, वज्रमुष्टि दो सैनिकों को लेकर आगे चल पड़ा। वे पेड़ों के बीच में से होते हुए समुद्री पानी की झील के पास पहुँचे। झील के पास के पेड़ों की आड़ में से उन्होंने देखा कि झील में छोटी छोटी तमेड़ तैर रही थीं। उस झील की लम्बाई-चौड़ाई चालीस-पचास गज़ से अधिक न थी। उसके उस पार से अजीब अट्टहास-कोलाहल सुनाई पड़ रहा था। (अभी और है)

नाविक सिन्दबाद

मैं घाटी देखने के लिए निकल पड़ा। वहाँ के पत्थर मामूली पत्थर न थे। उनमें मणियाँ थीं। पत्थरों से टपक कर, मणियाँ नीचे सब जगह ढेर के ढेर पड़ी थीं। कहीं कहीं ढेर, मनुष्य जितने ऊँचे थे। मैं आँख खोलकर, अच्छी तरह गौर से इन मणियों को ठीक तरह देख भी न पाया था कि एक भयंकर दृश्य मैंने देखा। उन मणियों के ढेर में, ताड़ के समान, काले भयंकर साँप घूम रहे थे। ऐसा लगा कि वे साँप हाथियों को भी आसानी से निगल सकते थे। खूब सवेरा होने पर कहीं वे भयंकर विशाल पक्षी उन्हें न देख लें, इसलिये वे अपनी अपनी छुपने की जगह जा रहे थे। रात्री के समय ही उस घाटी में वे स्वच्छन्द घूम पाते थे।

उन भयंकर साँपों से बचता हुआ मैं शाम तक घाटी में घूमता-फिरता रहा। कहीं कहीं आराम भी किया। मुझे भूख भी न लगी, सिवाय उन साँपों से बचने के मुझे और कुछ न सूझा।

दूसरी समुद्र-यात्रा

CHITRA

ढूंढते ढूंढते मुझे एक गुफ़ा दिखाई दी। वह मुश्किल से मेरी जितनी थी। यह सोच कि रात भर वहाँ रह सकूँगा, बाहर एक बड़ा पत्थर रख, मैं रेंगता रेंगता अन्दर गया। थोड़ी दूर जाने पर मुझे यह पता लगा कि मैं गुफ़ा में न घुस कर एक काले साँप की चौकड़ी में घुस रहा था। वह साँप अपने अंडों की रखवाली के लिए, चारों तरफ़ अपने को लपेट कर पड़ा हुआ था। यह पता लगते ही मेरे होश-हवाश जाते रहे। मैं बेहोश गिर पड़ा।

जब मुझे होश आया और मैं पत्थर हटाकर बाहर निकल सका, तबतक सवेरा हो चुका था। मेरी टाँगें चीथड़ों की तरह हो गई थीं। मैं खड़ा नहीं हो पाता था। भूख के कारण मैं सूख गया था। आराम के न होने से कतई कमज़ोर हो गया था। अभी जिन्दा था, यह ही काफ़ी था। गनीमत थी कि वह साँप मुझे निगल नहीं गया था। मैं खड़े होकर, चारों तरफ़ देख ही रहा था कि मेरे पास, पत्थरों पर, माँस का एक टुकड़ा गिरा। मैंने घबराकर सिर उठाकर देखा। परन्तु माँस का टुकड़ा फेंकने वाला मुझे कहीं वहाँ दिखाई नहीं दिया।

इतने में मुझे छुटपन की एक बात याद आ गई। वह मैंने उन लोगों से सुनी थी, जो रत्नों वाले द्वीपों में होकर आये थे। बात यह थी कि जो लोग रत्न इकट्ठे करने आते हैं, वे भेड़ों को काटकर, माँस के टुकड़े पर्वत पर से घाटियों में ढकेल देते हैं। वे जब मणियों पर पड़ते हैं तो मणियाँ उनमें चिपक जाती हैं। तब बड़े बड़े पक्षी आकर उन टुकड़ों को उठाकर पहाड़ों पर अपने घोसले में ले जाते हैं। तब रत्न ढूंढने वाले शोर-शराबा करके पक्षियों को भगा देते हैं

और मांस में चिपके हुए मणियों को ले लेते हैं।

यह बात याद आते ही उस घाटी से बाहर जाने का उपाय भी मुझे सूझा। मैं तुरन्त बड़े बड़े मणियों को लेकर, उन्हें जेबों में, जंघिये में जहाँ बन सका, वहाँ रखने लगा। फिर मैंने अपनी पगड़ी उतारी और मांस के टुकड़े को अपने पेट पर बाँध लिया। फिर सीधा लेट गया। थोड़ी देर में एक पक्षी आया। मांस के टुकड़े को अपने नखूनों में रख, मुझे आकाश मार्ग द्वारा घाटी से उठा, अपने घोंसले के पास ले गया। फिर वह मेरे पेट से बंधे मांस के टुकड़े को और मुझे भी, काट काट कर अपने बच्चों को देने लगा। सौभाग्य से उसी समय बड़ा होहल्ला होने लगा। पक्षी उड़ गया। मैं उठ खड़ा हुआ। मेरा मुख और कपड़े खून से तर थे।

इस बीच में वहाँ एक व्यापारी भागा भागा आया। और मुझे देख हक्का-बक्का रह गया। पर मुझ को हिलता न देख, और यह जान कि उसको मुझसे कोई खतरा न था, वह हिम्मत करके आगे आया और मांस के टुकड़े को गौर से देखने लगा। उसमें कोई मणि न थी। वह हाथ उठाकर—"अल्लाह! धोखा, दगा" चिल्लाता तालियाँ पीटने लगा।

मैंने उससे बड़ी अदब से बातचीत की। पर उसका अदब से बात करना तो दूर वह गुस्से से पूछने लगा—"तुम कौन हो! मेरा धन लूटने के लिए तुम यहाँ क्यों आये हो!

"डरिये मत सेठजी! मैं चोर नहीं हूँ। आपका मैंने कुछ चुराया भी नहीं है। मुझे देखकर आप, कोई भूत हूँ या पिशाच

हूँ, यह मत समझिये। मैं मनुष्य हूँ। व्यापारी हूँ। मैंने बहुत अजीब चीज़ देखी है। मेरा यहाँ होना ही एक विचित्र किस्सा है। वह किस्सा मैं आपको सुनाता हूँ। परन्तु पहिले मैं आपको सस्नेह कुछ मणियाँ देना चाहता हूँ। लीजिये। मैं उनको उस जगह से चुन कर लाया हूँ, जहाँ अभी तक मनुष्य के पैर नहीं पहुँचे हैं।"

यह कहते हुए मैंने कुछ मणियों को.... कई एक बड़ी बड़ी भी, उस व्यापारी के हाथ में रखीं। तब वह बड़ा खुश हुआ और भाट की तरह मेरी प्रशंसा करने लगा। उसने कहा—"इसमें से एक मणि काफ़ी है। मैं जन्म भर ऐशो-आराम से रह सकता हूँ। मैंने पहिले अपनी ज़िन्दगी में इतनी क़ीमती मणियाँ कभी न देखी थीं। राजाओं के पास भी इतनी बहुमूल्य मणियाँ नहीं होती हैं।"

इतने में और व्यापारी भी वहाँ जमा हो गये। उन सबको मैंने अपनी कहानी सुनाई। मेरी कहानी सुनकर वे बड़ी देर तक आचरज करते रहे। उन्होंने कहा—"आप अल्लाह की मेहरबानी से ही उस

घाटी से बाहर निकल पाये हैं! नहीं तो वहाँ से आना आदमी के बस में नहीं है" यह देख कि मैं भूख के कारण काँटा हो रहा था, वे मुझ पर दया कर अपने तम्बुओं में ले गये, और वहाँ मुझे उन्होंने खाना खिलाया-पिलाया। तम्बू में मैं एक रात और एक दिन सोता रहा।

अगले दिन, हम सब मिलकर पहाड़ों से उतरकर समुद्र के किनारे गये। वहाँ से नौकाओं में बैठकर कपूर द्वीप में गये। वहाँ बड़े बड़े कपूर के पेड़ थे। कड़ी से कड़ी धूप में भी उन पेड़ों के नीचे ठण्ड रहती थी। एक एक पेड़ के नीचे सौ सौ आदमी एक साथ आराम कर सकते थे। इन पेड़ों की खाल उतार दी जाती है। और जब उनमें से रस टपकता है तो उस रस को इकट्ठा कर उसमें से कपूर निकाला जाता है।

मैंने इस द्वीप में एक बड़ा हरिण देखा। होने को तो वह खड्ग मृग की जाति का था; पर वह उससे कहीं अधिक बड़ा था। वह ऊँट से भी बड़ा होता है। उसके सिर पर दस फुट लम्बे सींग होते हैं। वह साधारण रूप से घास वगैरह चरता रहता

है। मगर कभी कभी अगर उससे भिड़न्त हो गई तो हाथी भी उसके सामने टिक नहीं सकता था। वह हाथी को भी अपने सींगों से भोंककर उसको उठाकर फेंक देता है। हाथी मर जाता है; पर हाथी का मद उस हरिण की आँखों में गिर पड़ता है और वह देख नहीं पाता। इस हालत में बड़ा विशाल पक्षी आकर उन दोनों को उड़ा ले जाता है।

इस द्वीप में मैंने और कई प्रकार के जीव-जन्तु देखे।

उस द्वीप में हमने आराम से कुछ दिन बिताये। मैंने अपनी कई मणियों को बेचकर बहुत सोना-चान्दी भी खरीद लिया था। उनको ढोने के लिए एक नाव काफ़ी न थी। वहाँ से रवाना हो हम कितने ही द्वीपों में गये। नये नये देश, नये नये शहर देखते हुए, व्यापार करते हुए हम बसरा पहुँचे और वहाँ से नदी में होते हुए बग़दाद आ गये। ढेर-सा सोना, बेशुमार रत्न, कीमती मणि लेकर मैं घर गया। बन्धु-मित्र मुझे देखकर बड़े खुश हुए। जिस किसी से जान-पहिचान थी, उन सबको बिना भूले मैंने तोहफ़े भेजे।

उस दिन से, अच्छे अच्छे पकवान खाता, मधुर पेय पीता, क़ीमती कपड़े पहिनता, गद्दोंवाले पलंगों पर सोता वैभव के साथ ज़िन्दगी बिताने लगा। हमेशा यार-दोस्त मुझे घेरे रहते।

रोज़ मुझसे मिलने बड़े बड़े लोग आते, और दूर दूर देशों की बातें सुनाते। जो वे चाहते मैं बताता। जो कोई मेरे अनुभव सुनता, मुझे बधाई देता। यों दूसरी समुद्र यात्रा समाप्त हुई। (अभी और है।)

बाज़ीगर की भक्ति

एक गाँव में बिहारी नाम का एक बाज़ीगर रहा करता था। वह हर साल कुछ दिनों के लिये गाँव गाँव में फिरता, और चौराहों पर खड़ा होकर, गला फाड़-फाड़कर चटपटी बातें करता। फौरन गाँव के बच्चे, नौजवान जमा हो जाते।

बिहारी, वे सब हुनर जो उसने गुरु से सीखे थे, हर जगह, बिना भूले दिखाता। वह गेंदों से जादू करता, तलवार के पैंतरे दिखाता। आखिर जो कुछ दर्शक देते, उसे लेकर चला जाता।

बाज़ीगरी में, सब का कहना था, बिहारी को मात करनेवाला कोई न था। परन्तु उसकी आमदनी इतनी थी कि दो जून ठीक खाना भी न मिलता था। बहुत गरीबी में दिन कटते थे।

"यह ज़िन्दगी इस तरह गुज़रती गई; अगर सुख न भी मिले, तो मुझे कोई अफ़सोस नहीं। यह काफ़ी है। अगर अगले जन्म में भगवान की दया से कुछ सुख मिले।"—बिहारी सोचा करता।

बिहारी के गाँव में एक देवी का मन्दिर था। आसपास के गाँववालों का विश्वास था कि उस देवी की महिमा अपार थी। नवरात्री के दिनों में, दूर दूर से लोग आते, उत्सव मनाते, सैकड़ों रुपया खर्च करते। यद्यपि बिहारी भूखा-नंगा गाँव गाँव घूमता-फिरता, तो भी नवरात्री के दिनों में ज़रूर अपने गाँव में पहुँच जाता।

होते होते बिहारी और भी गरीब हो गया। बाज़ीगरी में यद्यपि कोई कसर न थी, तो भी उसकी आय हर रोज़ घटती

श्री सुरेशचन्द्र

जाती थी। क्योंकि आसपास के गाँव वालों ने उसका जादू सैकड़ों बार देख रखा था। उन्हें उसके जादू में कोई नयी चीज न दिखायी देती थी।

यूँ तो वह पहिले ही गरीब था: परन्तु उम्र के साथ साथ वह और भी गरीब होता जाता था।

जैसे जैसे इस दुनियाँ में उसका सुख कम होता जाता था, वैसे वैसे उसकी परलोक की सुख की आकांक्षा प्रबल होती जाती थी। उसने गाँवों में फिरना कम कर दिया। अधिक समय वह मन्दिर में ही बिताने लगा।

नवरात्री का उत्सव आया। सब उत्सव के काम में मग्न थे। गाँव के लड़के देवी के लिए फूल इकट्ठा कर रहे थे। आराधना के लिए गाड़ियों में धान्य, शाक-सब्जी आ रही थी। मन्दिर के चारों ओर पंडाल बनाया जा रहा था। तोरण बाँधे जा रहे थे।

यह सब देख बिहारी तन्मय हो गया। "पुण्यात्मा हैं। वह देवी भी इन सब को अपनी कृपादृष्टि से देखे बग़ैर कैसे रह सकती है! ब्राह्मणों का तो कहना ही क्या! वे मन्त्र पढ़ते हैं। पूजा करते हैं। जाने कितना ही पुण्य कमाते हैं।"—वह सोचा करता।

सोचते सोचते उसे अफ़सोस होने लगा—"इस उत्सव में कुम्हार, बाजे वाले, गायक, उपदेशक—आखिर रसोइये, कहार भी, देवी की भरसक सेवा कर पुण्य कमा रहे हैं। पर मैं कुछ नहीं कर रहा हूँ। कुछ कर नहीं पाता हूँ।" बिहारी ने एक लम्बी साँस खींची।

उत्सव प्रारम्भ हुआ। नौ दिन तक दिन-रात मन्दिर में धूम मची रही। इस जलसे को देखकर बिहारी को सन्तोष भी हुआ और दुख भी। "इतने लोगों ने इतने ढंगों से देवी की सेवा की है। मैंने क्या किया है!" नौवें दिन उसे एक बात सूझी और उस बात से उसका सारा दुख काफ़ूर हो गया।

उस दिन रात को पूजा खतम हुई और सब चले गये। कहीं प्रसाद बाकी न रह गया हो, यह देखने के लिए पुजारी का मन्दिर में पैर रखना था कि एक अजीब घटना घटी। सिन्दूर, फल, फूलों से लदी देवी की मूर्ति के सामने बिहारी तलवार चला रहा था। गेंद के जादू दिखा रहा था।

पुजारी ने तुरन्त धर्मकर्ता के पास जाकर कहा "देखिये, बिहारी क्या कर रहा है!"
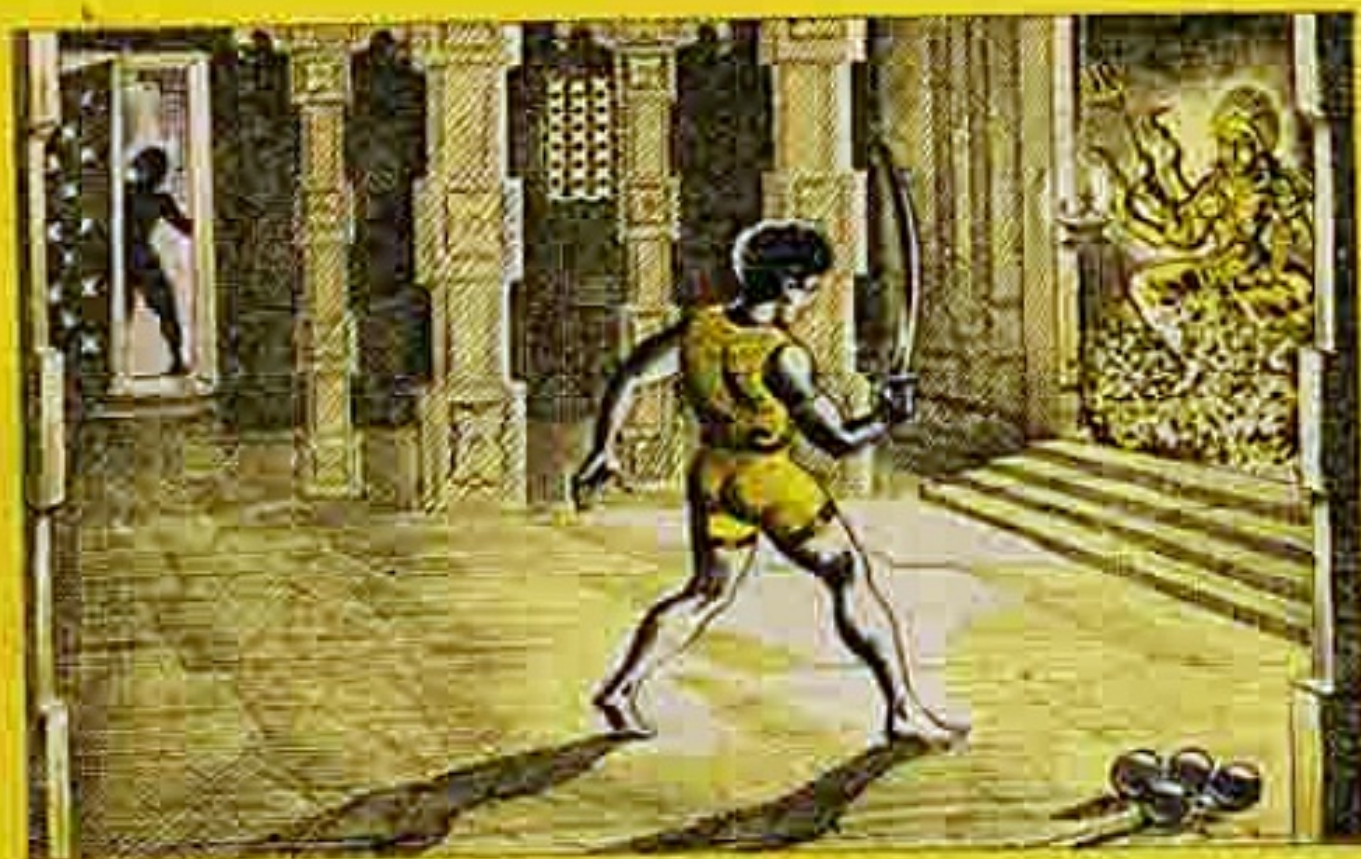
"क्या कर रहा है?"—धर्मकर्ता ने हड़बड़ाते हुए पूछा।

"मन्दिर में देवी की मूर्ति के सामने बाज़ीगरी कर रहा है।"

"तुम जाकर शास्त्री जी, और शर्मा जी को बुलाकर लाओ।" पुजारी को उनके पास भेज, धर्मकर्ता स्वयं मन्दिर गया। वह चुपचाप मन्दिर के किवाड़ की आड़ में खड़ा हो, छिद्र में से अन्दर देखने लगा। वह एकायक काँपने लगा।

मन्दिर में, बिहारी इस तरह पड़ा था, जैसे सो रहा हो। देवी उसका सिर अपनी गोद में रख, एक हाथ से पंखा झलती, दूसरे हाथ से साड़ी का छोर पकड़ उसका पसीना पोंछ रही थी। जहाँ देवी की मूर्ति होनी चाहिये थी, वह वहाँ न थी। आश्चर्य की बात थी।

तुरत धर्मकर्ता दरवाज़े के पास साष्टांग कर देवी की स्तुति करने लगा। इस बीच में, शास्त्री जी और शर्मा जी आदि, को लेकर पुजारी भी वहाँ पहुँचा। उन्होंने धर्मकर्ता को देखकर पूछा—"क्यों जी! क्या बात है?"

धर्मकर्ता उठा। सब मन्दिर में घुसे। मूर्ति अपनी जगह पर थी। बिहारी आराम से सो रहा था। धर्मकर्ता ने स्वयं जो दृश्य देखा था उसके बारे में उसने दूसरों को भी बताया।

ब्राह्मणों को विश्वास न हुआ। परन्तु मन्दिर में देवी के पद-चिन्ह साफ़ दिखायी दे रहे थे। मूर्ति की साड़ी का छोर पसीने से भीगा हुआ था। "हम सब ढोंगी भक्त हैं। बिहारी ही देवी का लाड़ला लड़का है।" धर्मकर्ता ने कहा।

मित्र-भेद

आश्वासन पाकर स्वामी से
दमनक खुश हो गया वहाँ,
हुँकड़ रहा था संजीवक वह
निर्भय होकर खड़ा जहाँ।

अकड़ दिखाते दमनक ने झट
उसे कहा "हे मूरखराज!
हुँकड़ रहे क्यों व्यर्थ खड़े हो,
नहीं यहाँ तेरा है राज!

समझ लिया आखिर क्या तुमने
अपने को सब का सरताज,
मेरे स्वामी पिंगलक तुमको
बुला रहे इस क्षण ही आज!"

विस्मित हो बोला संजीवक—
"कहते तुम कैसी हो बात!
कौन तुम्हारा स्वामी है वह,
क्या है उसकी भाई जात?

परिचय नहीं हमारा उससे
फिर यह कैसी हुई पुकार?
नहीं जानते शायद तुम यह
मेरी भी है शक्ति अपार!"

दमनक बोला "तुम पर मुझको
दया आ रही सचमुच आज,
नहीं पता तुमको है शायद
किस बलशाली का यह राज।

गुस्ताखी की सज़ा मिलेगी
रुको ज़रा थोड़ी ही देर,
अ येगा खुद वन का राजा
पिंगलक महाबली जो शेर!"

सुनते ही यह संजीवक के
सूख गये अति भय से प्राण,
ब ला "मित्र, तुम्हीं कर सकते
हो मेरा अब उससे त्राण।

आये हो यदि ले चलने को
मुझे अभी अपने ही साथ,
तो लो उनसे अभय-वचन भी
जो हैं प्रबल तुम्हारे नाथ!"

'भारतीभक्त'

दमनक बोला "सच कहते हो,
अभय-वचन ले आता हूँ मैं
मित्र, तुम्हारे हित की खातिर
एक बार फिर जाता हूँ मैं।

क्योंकि नीति भी कहती है यह
राजा से रहना हुशियार;
पल में खुश हो जाते ये तो
पल में बरसाते अंगार।

सागर की गहराई में भी
चल सकना भाई आसान,
दुर्गम गिरि के उच्च शिखर पर
भी चढ़ सकना है आसान;

किंतु मृगपति के सम्मुख आना
है खतरे का कार्य महान,
नयी बात यह नहीं सुनाता
इसे जानता सकल जहान!"

इस प्रकार कहते दमनक ने
किया वेग से झट प्रस्थान,
बोला पिंगलक से आकर फिर—
"देख उसे आया श्रीमान!

नहीं जीव यह साधारण है
शिव का वाहन है साक्षात,
डरते डरते कर आया मैं
उससे निकट मतलब की बात।

विचरेगा वह मुक्त यहाँ जब
करता अति भीषण आवाज़,
शिव ने खुश हो भेज दिया है
उसे यहाँ का करने राज।"

पिंगलक बोला "निश्चय ही है
उसे प्राप्त शिव का आशीष,
इसीलिए वह गरज रहा है
निर्भय वन में उन्नतशीश।"

कहा तभी दमनक ने "मैंने
उससे कहा झुकाकर माथ,
शेर एक दुर्गा का वाहन
रहता है इस वन में नाथ।

वही हमारा राजा है भी,
हम सब उसके अनुचर-दास,
आये आप हुआ यह अच्छा
चलें अभी उनके ही पास!"

दमनक की सुन बात मुदितमन
बोला वन का राजा शेर—
"क्या ही अच्छी बात कही है,
तो फिर नहीं करो अब देर।

अभय-वचन मेरा देकर अब
ले आओ उसको झट पास
तुम तो मेरे सखा चतुर हो
नहीं मात्र अनुचर या दास!"

दमनक चला पुनः उधर ही
जिधर खड़ा संजीवक भीत,
लगा सोचने मन ही मन यह—
होगी ही अब मेरी जीत!

राजा को खुश करके मैंने
पाया है अपना अधिकार,
वश में करके अब इसको भी
साजूँगा अपना व्यापार!

मन ही मन यों प्लान बनाते
पहुँचा संजीवक के पास,
बोला "अभय-वचन राजा का
मिला तुम्हें अब हो न निराश।

मेरे भी तुम मित्र हुए अब
चलो शीघ्र मेरे ही साथ,
राज-कृपा पा गर्व न करना
देना तुम मैत्री का हाथ।

अगर कहीं तुम वंचक निकले
तो मँडरायेगा ही काल,
होगा मित्र तुम्हारा भी तब
दान्तिल के ही जैसा हाल!"

पूछा तब संजीवक ने झट
तोड़ अचानक अपना मौन—
"कथा सुनाओ पूरी ही अब
कहो भला दान्तिल था कौन!"

पोते का मोह

किसी ज़माने में, श्रावस्ती नगर में, एक सुमन्त नाम का समझदार युवक रहा करता था। पिता के मरने के बाद, वह माता का बड़ी लगन से पालन-पोषण किया करता। उसको सुखी रखने में ही, उसका सारा समय बीत जाता। इसलिए वह कोई काम-धन्धा भी रोज़ी के लिए न कर पाता। यह देख उसकी माता ने कहा— "बेटा तुम ही एक घर में आदमी हो। विवाह कर लो, तुम्हारी पत्नी मेरी देख-भाल करेगी और तुम समय निकालकर कोई काम-काज कर सकोगे।"

वह माता की बात को अस्वीकार न कर सका। उसने शादी कर ली। उसकी पत्नी बहुत सुन्दर थी। वह उसके साथ बहुत प्रेम से रहने लगा। पत्नी जान गई कि उसका पति अपनी माता को भी बहुत प्रेम करता था। उसने सोचा— "मेरा पति जब माता के होते हुए ही मुझे इतना प्रेम कर रहा है, अगर वह न हो तो जाने कितना प्रेम करेगा।" उसने माँ-बेटे में झगड़ा पैदा करने की ठानी। उसने पति से सास के बारे में चुगली की—"तुम्हारी माँ की मुझ से बनती ही नहीं है। हर बात की नुक्ताचीनी करती है। अगर गरम भोजन परोसती हूँ तो पूछती है कि भोजन क्यों गरम है। भोजन ठण्डा हो जाता है, तो पूछती है कि वह ठण्डा क्यों है। भरसक उन्हें खुश करने की कोशिश कर रही हूँ। पर उनको खुश करना मेरे बस की बात नहीं है।" कहते कहते आँखें भी तर कर लीं।

कुमारी ऊषा भटनागर

सुमन्त को पत्नी की बातों पर विश्वास हो गया। उसने एक दिन माँ से कहा—"माँ! लगता है तुम यहाँ सुखी नहीं हो। कहीं और जाकर रहोगी क्या?"

वह ताड़ गयी कि यह सब बहू की चुगली का फल था। "अच्छा तो, वैसा ही करूँगी!"—बुढ़िया ने कहा। वह गाँव में, बन्धुओं के घरों में नौकरी चाकरी करती, वे जो देते खाती, मुसीबतें झेलती झेलती दिन काटने लगी।

सास के चले जाने के बाद पत्नी को गर्भ हुआ। नौ महीने बाद उसने एक लड़के को जन्म दिया। "अब तक मेरी सास यहाँ थी मेरी कोख ही न फली। वह गयी कि नहीं कि बच्चा पैदा हुआ है।" वह अपनी सहेलियों से कहती। कुछ को तो उसकी बातों पर यकीन हो गया, और कुछ ने जाकर उसकी सास से कहा—"जानती हो, तुम्हारी बहू क्या कह रही है! कह रही है कि अब तक तू वहाँ रही तब तक उसके सन्तान ही न हुई।"

बुढ़िया यह सुनते ही खौल उठी। "अब क्या ज़िन्दगी में रखा है। धर्म ही मर गया है। मैं अब उसका श्राद्ध करूँगी।"

यह सोच वह कुछ चावल और तिल लेकर, श्मशान में गयी। वहाँ एक चूल्हा बनाकर, हंडिया में उन्हें पकाने लगी।

उसी समय एक मुनीश्वर उस तरफ़ से गुज़रा। उसने बुढ़िया को देखकर पूछा—"क्यों माई! कौन गुज़र गया है? क्यों श्मशान में रसोई बना रही हो?"

"तुम नहीं जानते बेटा! धर्म मर गया है। उसी को यह पिंड चढ़ा रही हूँ।"—बुढ़िया ने कहा।

"अरे, धर्म का क्या मरना! तुमसे किसने यह कहा है?"—मुनीश्वर ने पूछा।

"किसी के कहने की जरूरत है! मुझे खरी-खोटी सुनाकर, बहू के घर से निकाल देने के बाद, क्या उसने बच्चे को जन्म नहीं दिया है! क्या धर्म नहीं मरा!"—बुढ़िया ने पूछा।

मुनीश्वर ने बुढ़िया की कहानी सुनकर कहा—"तुम्हारे लड़के, और तुम्हारी बहू ने मिलकर तुम्हारी यह हालत की है! मैं अपनी तपस्या से उनको भस्म किये देता हूँ।" कहता कहता वह कमण्डल से पानी निकालकर हथेली पर डालने लगा।

तुरत बुढ़िया ने उसको रोकते हुए कहा—"बेटा! ठहरो! जाने दो! अगर वे चले गये तो मेरा पोता विचारा अनाथ हो जायेगा, कोई देखनेवाला न रहेगा!"

बुढ़िया ने अपनी आँखों से अपने पोते को देखा भी न था, पर मुनीश्वर उसका पोते के प्रति प्रेम देख, मुस्कराता चला गया।

इस बीच में, यह बात गाँव में फैल गई कि वह श्मशान में मृत धर्म का श्राद्ध करने गयी है। सुमन्त, और उसकी पत्नी, और लोग भी भागे भागे श्मशान गये।

"यह क्या कर रही हो माँ! आओ, घर चलें।" लड़के ने कहा।

बहू ने सोचा कि उसकी पोल खुल जायेगी। कहीं सास सब के सामने उसको बुरा भला न कहे। वह डर गई। उसने कहा—"मेरी अक्ल मारी गई थी। मुझे माफ़ करो, सास जी!"

बुढ़िया खुश हुई और उनके साथ चली गई। वह पोते को पालती-पोसती, सब कुछ भूल गई और उनके साथ आराम से बची-खुची जिन्दगी बिताने लगी।

फ्रीजिया देश में ट्रॉय नाम का नगर एक था। उस नगर के राजा का नाम वर्धन था। उसकी गर्भवती पत्नी को एक बार सपना आया कि उसके गर्भ से एक मशाल पैदा हुई है और उस मशाल की लपटों से ट्रॉय नगर और ईड़ा पर्वत जलकर भस्म हो गया है। वह भय के कारण चिल्लाती हुई तुरन्त उठ बैठी। उसने अपने पति से सपने के बारे में कहा।

वर्धन के कई लड़के थे। उनमें से एक का नाम ज्ञानी था, जो भविष्य के बारे में बता सकता था। इसलिये वर्धन ने ज्ञानी को बुलाकर उसकी माँ के सपने के बारे में पूछा। "जो पैदा होने जा रहा है, उससे हमारे नगर को बड़ी हानि होगी। इसलिये उसको पैदा होते ही मरवा दीजिये।"— ज्ञानी ने पिता को सलाह दी।

कुछ दिनों बाद शाम को जब अन्धेरा हो रहा था तो वर्धन की पत्नी ने एक लड़के को जन्म दिया। ज्ञानी की सलाह के अनुसार उस बच्चे को तुरत न मरवा कर वह काम राजा ने पशु-पालक के लिए छोड़ दिया। पशु पालक अपने पशुओं के साथ ईड़ा पर्वत पर रहा करता था। राजा से खबर पाते ही वह दौड़ा दौड़ा उसके पास गया। राजा के हुक्म के मुताबिक वह बच्चे को ईड़ा पर्वत पर मारने के लिए एक चोटी पर ले गया।

[एक ग्रीक पुराण कथा]

पर वह उस छोटे दुध-मुँह बच्चे को अपने हाथों से न मार सका। उसे दया आ गई। इसलिये उसे एक चोटी पर छोड़ वह घर चला गया। पर वह बच्चा मरा नहीं। क्योंकि कहीं से कोई मादा भालू आया और उस अनाथ बच्चे को उठाकर ले गया। उसने अपना दूध उसे पिलाया; धूप-सरदी से उसकी रक्षा की।

पाँच दिन बाद पशुपालक फिर उस चोटी पर गया। उस बच्चे को भालू की देखरेख में सुरक्षित पा उसे बड़ा अचरज हुआ। उसे उसमें दैव-कृपा दिखाई दी। वह जान गया कि उस बच्चे की किस्मत में असमय मृत्यु न लिखी थी। भालू के दूर जाते ही वह बच्चे को थैले में डालकर घर ले गया। क्योंकि लड़का बहुत सुन्दर था, इसलिये उसने उसका नाम मोहन रखा।

इस तरह मौत से बचकर, मोहन पशु-पालक के घर में ही बड़ा होने लगा। बचपन से ही उसमें असाधारण बुद्धि, बल, और सौन्दर्य था। वह बच्चा ही था कि कुछ चोर उसकी गाय चुरा ले गये। मोहन ने अकेले ही उनका पीछा किया और उनको मार-भगाकर अपनी गाय वापिस ले आया। मोहन को बैलों को लड़ाने का शौक था। जो बैल जीतता, उसके सींगों पर फूल बाँधता और जो हारता उसके सींगों पर पुआल लपेटता। और जो बैल सब बैलों को जीत लेता, उसको दूसरे झुण्ड के बैलों से लड़वाता और कहा करता कि वह उसके सींगों पर सोना मढ़वा देगा।

* * *

जब मोहन ईड़ा पर्वत पर गाय चरा रहा था, तब देवलोक में एक विचित्र घटना घटी। एक जगह विवाह हो

रहा था। वहाँ देवी-देवता, अप्सरा वगैरह एकत्रित हुए। उसी समय कलह-प्रिया नाम की अप्सरा ने उनके बीच एक सोने का फल फेंक दिया। उस फल पर लिखा था—"अत्यन्त सौन्दर्यवती के लिये"। एकत्रित अतिथियों में केवल तीन अप्सराएँ ही उस फल के लिये लड़ने-झगड़ने लगीं। उनका नाम भूपुत्री बुद्धिमति और कामिनी था।

कोई यह फैसला न कर पायी कि उनमें "अत्यन्त सौन्दर्यवती" कौन थी। इसलिये वे सीधे देवनाथ के पास गयीं, और उनसे कहा कि वे यह निश्चय करके बतायें कि उनमें सबसे अधिक सुन्दर कौन थी।

"यह फैसला मैं नहीं कर सकता हूँ। ईडा पर्वत पर रहनेवाले मोहन के पास जाकर अपने झगड़े का फैसला करवाओ।" देवनाथ ने उनको सलाह दी।

जब तीनों अप्सराएँ देवलोक से ईडा पर्वत पर पहुँच रही थीं तब मोहन उसकी सब से बड़ी चोटी पर बड़े मौज में अपनी गायें चरा रहा था। वे उसके पास गईं। उसके हाथ में सोने का फल रखकर कहा—"मोहन! तुम सुन्दर हो, बुद्धिमान हो! हममें से कौन सबसे अधिक सुन्दरी है, यह निर्णय करके, उसको यह फल दे दो। यह देवनाथ की आज्ञा है।"

"देवी! मैं गौ-ढंगर चराने वाला मामूली आदमी हूँ। मैं अप्सराओं के सौन्दर्य को कैसे परख सकता हूँ? यह काम मैं कैसे कर सकता हूँ? अगर आप चाहें तो मैं इस फल के तीन बराबर भाग करके दे सकता हूँ। तीनों भाग आपस में आप बाँट लेना।" मोहन यों अपनी नादानी दिखाते हुए गौओं के पास जाने लगा। "यह देवनाथ की आज्ञा

है। आज्ञा का उल्लंघन किया तो बड़ा खतरा है।" अप्सराओं ने उसे डराया-धमकाया।

"अच्छा, तो आपको मेरा निर्णय मानना होगा। यह नहीं होना चाहिये कि जो हार जायें वे मुझ से नाराज हो उठें। मैं आखिर मनुष्य ठहरा। अगर गल्ती भी कर बैठा तो आपको बुरा नहीं मानना चाहिये। मैं अपनी बुद्धि के अनुसार निर्णय दे देता हूँ।" मोहन ने कहा।

तीनों उसकी यह बात मान गयीं।

—"आप तीनों को एक साथ देख रहा हूँ। इसलिये किसी एक को ठीक तरह नहीं देख पा रहा हूँ। आप दूर चले जाइये और एक एक करके मेरे पास आइये।"— मोहन ने कहा।

तीनों दूर चली गईं। पहिले भगुश्री उसके पास आयी, ताकि वह उसके सौन्दर्य को अच्छी तरह देख सके। वह चारों ओर घूमती हुई कहने लगी "मोहन— देख! अगर तूने यह फल मुझे दिया तो मैं वायदा करती हूँ कि किसी युद्ध में तेरी हार नहीं होगी। मैं यह वर भी दूँगी कि सौन्दर्य और बुद्धि में, तेरे समान इस संसार में कोई न हो।"

—"देवी! मैं तो गड़रिया हूँ। मुझे युद्धों से क्या वास्ता! और विजय से क्या सम्बन्ध!"—मोहन ने कहा।

उसके जाने के बाद बुद्धिमती आई। "मोहन! अगर तुमने यह फ़ैसला दिया कि तीनों में मैं ही सबसे अधिक सुन्दर हूँ, तो मैं तुम्हें सारे एशिया का राजा बना दूँगी। यह वर दूँगी कि संसार में तुम से अधिक कोई धनी न हो।"—उसने मोहन से कहा।

"मैं घूस लेकर झगड़े का फ़ैसला नहीं दूँगा। माफ़ कीजिये।"—मोहन ने कहा।

अन्त में कामिनी आई। उसे देखते ही वह बोली—"मोहन! सारे फ्रीजिया में तुम जैसे सुन्दर कोई नहीं है। सचमुच तुम जैसे को ही स्पार्टा देश की राजकुमारी भुवन सुन्दरी पत्नी होनी चाहिये।"

"उसका नाम भी मैंने नहीं सुना है।"—मोहन ने कहा।

"नहीं सुना! ग्रीस के सब राजकुमार उससे विवाह करने के लिये आये थे। परन्तु उसने राजा के भाई के साथ विवाह कर लिया। चाहते हो तो तुम्हें वह मिल सकती है। क्या कहना है?" कामिनी ने कहा।

"क्या तुम वायदा करती हो कि तुम उसे मुझे दिलाओगी?"—मोहन ने कहा।

कामिनी ने इस बात की प्रतिज्ञा की। मोहन ने सोने का फल उसे दे दिया। इस वजह से बाकी दो अप्सराओं को उस पर गुस्सा आया। कुछ बुरा-भला कहने को वे आगे बढ़ीं। पर चूँकि उन्होंने वचन दिया था कि वे उसका निर्णय मानेंगी, वे कुछ कर न पाईं।

* * *

भुवन सुन्दरी, सचमुच बहुत सुन्दर थी। नाज़ुक भी। वह साक्षात् देवनाथ की पुत्री थी। सुना जाता था कि वह हंस के अंडे से पैदा हुई थी। बचपन से ही स्पार्टा का राजा मर्दन उसका पालन-पोषण करता आया था। जब वह सयानी हुई तो ग्रीस के सारे राजकुमार दूर दूर से उसको देखने स्पार्टा आये। उनमें, देवमय, प्रताप, भूधर, रूपधर वगैरह भी थे। इनमें से सिर्फ़ रूपधर ही खाली हाथ आया। बाकी सब भुवनसुन्दरी के लिए अनगिनित उपहार लाये।

मर्दन के सामने यह बड़ी समस्या आई कि भुवन सुन्दरी को किसको दिया जाय! अगर एक को देता है, तो बाकी नाराज़ हो सकते हैं। इसलिए न उसने किसी के

"पर उसकी तो शादी पहिले ही हो गई है। अगर चाहूँ तो मुझे कैसे मिल सकती है?"—मोहन ने पूछा।

कामिनी ने हँसकर कहा—"कुछ भी हो, यह मेरे जिम्मे रहा कि वह तुम्हें देखते ही तुम्हें चाहने लगे। उसके बाद, वह, घर-बार, पति, सब छोड़कर तुम्हारे पीछे आ जाएगी।"

"भुवन सुन्दरी क्या सचमुच बहुत सुन्दर है?"—मोहन ने पूछा।

"अरे पागल! वह सौन्दर्य में मुझ से कोई कम नहीं है।"—कामिनी ने हँसती हुई मोहन से कहा।

साथ भुवन सुन्दरी का विवाह किया, न किसी के उपहार ही स्वीकार किये।

शुरू से ही सिर्फ़ रूपधर जानता था कि भुवन सुन्दरी का विवाह उसके साथ नहीं किया जायेगा। उसने मर्दन के पास जाकर कहा—"मैं जानता हूँ कि आप एक द्विविधा में हैं। आप मेरी मदद कीजिये; और मैं आपको यह समस्या हल करने का उपाय बता दूँगा!"

"मैं तुम्हारी क्या मदद कर सकता हूँ और तुम मेरी समस्या कैसे हल कर सकते हो?" स्पार्टा के राजा मर्दन ने पूछा।

"आप ऐसा कीजिये कि आपके भाई चन्द्रदत्त की लड़की पद्ममुखी का विवाह मुझसे कीजिये। फिर मेरी जिम्मेवारी यह होगी कि आप असली लड़की को चाहे किसी को दें कोई झगड़ा न करे। मैं इसके लिये एक तरीका बताऊँगा।"—रूपधर ने कहा।

"तुम पहिले उपाय बताओ; पद्ममुखी के साथ विवाह कराना मेरा काम रहा!"—मर्दन ने वचन दिया।

"तो फिर ऐसा कीजिये कि उन सब राजकुमारों को फिर बुलवाइये, जो भुवन सुन्दरी से विवाह करने के लिये आये थे। उन सब से यह शपथ करवाइये कि जिस किसी से वह विवाह करे, अगर उस पर किसी और के कारण कोई आपत्ति आई, तो सब मिलकर उसकी मदद करेंगे। अगर ऐसा हुआ, तो उसका विवाह निर्विघ्न हो जायेगा!"—रूपधर ने कहा।

यह उपाय मर्दन को पसन्द आया। उसने ग्रीक राजकुमारों को बुलाकर कहा—"तुम सब भुवन सुन्दरी से विवाह करना चाहते हो; परन्तु वह तुममें से एक के साथ ही विवाह कर सकती है। वह

जिससे विवाह करेगी, उसके विरुद्ध ईर्ष्या वश कई तलवार भी पकड़ सकते हैं। उस हालत में, तुम यह शपथ करो कि तुम सब उसके पति की मदद करोगे। तब ही उसके पति का निर्णय किया जा सकेगा।"

राजकुमारों ने उसकी इच्छा के अनुसार शपथ ली। मर्दन ने तब भुवन सुन्दरी का विवाह प्रताप से कर दिया। कुछ दिनों बाद उसकी मृत्यु हो गई। उसकी जगह प्रताप स्पार्टा का राजा बना।

जब भुवन सुन्दरी का विवाह हो रहा था, तभी रूपधर और पद्ममुखी का भी विवाह हुआ। पद्ममुखी के पिता, चन्द्रदत्त ने अपने जमाई से कहा—"बेटा! मैं अपनी लड़की को छोड़कर न रह पाऊँगा। तुम भी स्पार्टा में रहो।" पर रूपधर ने उसकी न सुनी। वह अपनी पत्नी को लेकर रथ पर बैठ गया। चन्द्रदत्त से रहा न गया। वह पागल की तरह रथ के पीछे भागता भागता चिल्लाने लगा—"अरी बेटी! मत जाओ, मत जाओ!"

ससुर का व्यवहार रूपधर को बिल्कुल पसन्द न आया। उसका यों रथ के पीछे चिल्लाना बुरा लगा। उसने अपनी पत्नी से कहा—"क्या है यह? अगर तुझे मेरे साथ जाना है तो इच्छा से आ। नहीं तो मुझे छोड़कर अपने पिता के पास चला जा।" पद्ममुखी ने कोई जवाब न दिया। उसने अपने चेहरे का परदा और नीचे कर लिया।

यह देख चन्द्रदत्त अपनी गलती समझ गया। पति के साथ जाना पत्नी का धर्म है। जिस स्थान पर यह घटना घटी थी, वहाँ उसने अपनी लड़की की मूर्ति बनवाई। यह मूर्ति स्पार्टा नगर से चार मील दूरी पर अब भी है। (अभी और है)

एकावली कादम्बरी

देवलोक में, एक गन्धर्व राजा के कादम्बरी नाम की एक लड़की थी। वह बहुत ही सुन्दर थी। उसकी 'महाश्वेता' नाम की एक सहेली थी।

कादम्बरी और महाश्वेता, कभी भी एक दूसरे से अलग होकर न रहा करतीं। हमेशा साथ रहते। विवाह होने से कहीं उन दोनों को अलग न होना पड़ जाये, इसलिये उन्होंने विवाह न करने का निश्चय कर लिया था।

कादम्बरी के सौन्दर्य और गुण आदि के बारे में सुनकर चन्द्रमा उससे प्रेम करने लगा था। एक दिन, एकान्त में उसने कादम्बरी से अपने मन की बात कही। कादम्बरी भी न न कर सकी। वह भी चन्द्रमा को चाहती थी। पर महाश्वेता और उसका निश्चय उसको यकायक याद आया और वह कोई जवाब न दे सकी।

एक बार महाश्वेता फूल तोड़ने के लिए जंगल में गई। वहाँ उसको देखकर पुण्डरीक नाम के ऋषि-पुत्र को उससे प्रेम हो गया। वह महाश्वेता के नज़दीक जाकर अपने प्रेम के बारे में कह रहा था कि उस तरफ़ पुण्डरीक का मित्र कपिंजल भी आया।

कपिंजल को स्त्री-मात्र से क्रोध था, क्योंकि वह हमेशा तपस्या और अध्ययन में जुटा रहता। कपिंजल का विश्वास था कि स्त्रियाँ तपस्या में बाधा पहुँचाती हैं इसलिए तपस्वियों को विवाह नहीं करना चाहिये। उसने तो निश्चय ही कर रखा था कि वह विवाह न करेगा और पुण्डरीक से भी निश्चय करवा लिया था कि वह भी विवाह न करेगा।

श्री प्रमोद कुमार विद्यार्थी

महाश्वेता को बुलाकर कहा—"मैं चन्द्रमा की बात भूल जाती हूँ। तुम भी पुण्डरीक की बात भूल जाओ।"

यद्यपि उस समय जंगल में पुण्डरीक ने कपिंजल से कह तो दिया था कि वह कभी महाश्वेता की बात न सोचेगा और उससे कभी न मिलेगा; तो भी भरसक भुलाने की कोशिश करने पर भी वह महाश्वेता को भुला नहीं पा रहा था। वह दिन-रात महाश्वेता की फ़िक्र में रहता। हमेशा उसी के बारे में सोचता रहता। इसी फ़िक्र में वह बीमार भी पड़ गया। आख़िर उसको कपिंजल से साफ़ साफ़ सब बातें कहनी पड़ीं।

कपिंजल पुण्डरीक पर जान देता था। उसकी हालत देखकर महाश्वेता पर उसका गुस्सा जाता रहा। वह स्वयं उसको पुण्डरीक के लिए लाने के लिए देव-लोक की ओर चल पड़ा। परन्तु महाश्वेता को भेजने के लिए कादम्बरी न मानी। उसे बहुत मनाया; फिर भी वह न मानी। कपिंजल दाँत कटकटाते हुये शाप दिया—"अच्छा! महाश्वेता के लिए मेरा मित्र पुण्डरीक प्राण छोड़ देगा। उसी तरह वह भी जो तुम से प्रेम करके विवाह करना

अब उसको पुण्डरीक महाश्वेता से बात करता दिखाई दिया। कपिंजल को गुस्सा आया और गुस्से में वह महाश्वेता को शाप देने को ही था कि पुण्डरीक उसके पाँवों पर पड़कर उसे मनाने लगा कि वह शाप न दे। तब कपिंजल ने कहा—"अच्छा! अगर तुमने यह वचन दिया कि तुम इस लड़की के बारे में कभी न सोचोगे तो मैं शाप न दूँगा।" पुण्डरीक ने उसकी बात मान ली। तब वह पुण्डरीक को अपने साथ लेकर चला गया।

यह बात जब कादम्बरी के कान तक पहुँची तो उसे बड़ा गुस्सा आया। उसने

चाहता है तड़प तड़प कर, मर जाएगा। तुम भी उसके लिए दिन रात रोओगी। मेरी बात याद रखना।"

महाश्वेता तुरत कपिंजल के पैरों पर पड़कर रोने लगी—"आपने मेरी सहेली को क्यों इस तरह शाप दिया है! मैं आपके साथ पुण्डरीक के पास आऊँगी। आप अपना शाप वापिस ले लीजिये।" यह बात सुनकर कपिंजल का क्रोध कुछ शान्त हुआ। उसने कहा—"दिया हुआ शाप वापिस नहीं लिया जा सकता। शाप के अनुसार उसका प्रियतम मरकर रहेगा। परन्तु मैं अपना शाप बदल दूँगा ताकि वह फिर जीवित हो सके।"

कादम्बरी से कहकर महाश्वेता कपिंजल के साथ पुण्डरीक को देखने गई। उसके आने में देरी हो गई थी और तब तक पुण्डरीक मर चुका था। महाश्वेता ज़ोर ज़ोर से रोने लगी, उसके साथ उसने सती होने की सोची। कपिंजल को भी दुःख हो रहा था कि उसी के कारण पुण्डरीक और महाश्वेता विवाह न कर सके थे। उसी के कारण न केवल उसके मित्र को ही प्राण छोड़ने पड़े थे, अपितु महाश्वेता भी अपने प्राण छोड़ने को सिद्ध हो रही थी। वह पछताने लगा।

यह बात जब कादम्बरी के पास पहुँची, तो उसने सोचा कि उसी के कारण महाश्वेता मर रही थी। कादम्बरी में परिवर्तन देख धीमे धीमे चन्द्रमा ने उससे सारी बात मालूम कर ली। कादम्बरी ने कहा कि महाश्वेता के बग़ैर वह एक क्षण भी जीवित न रह सकेगी। तब चन्द्रमा ने कहा—"यह मेरा काम रहा कि मैं महाश्वेता को मरने न दूँगा। तब क्या तुम मुझसे विवाह करोगी!" कादम्बरी यह मान गई।

महाश्वेता चिता पर सती होने को थी कि वह पुण्डरीक के शव को यकायक उठाकर ले गया।

चन्द्रमा का यह उद्देश्य था कि यदि पुण्डरीक का शव ही न रहा तो महाश्वेता को सती होने का भी मौका न मिलेगा।

पर कपिंजल भला क्यों मानता! उसने चन्द्रमा को रोककर कहा कि पुण्डरीक का शव वहीं रख दो। पर चन्द्रमा न माना। तब कपिंजल ने शाप दिया—"तुमने मनुष्य की बात की परवाह नहीं की है, इसलिए तुम भी मनुष्य के रूप में भूलोक में पैदा होगे। तुम भी पुण्डरीक की तरह अपनी प्रियतमा के लिए तड़प तड़प कर मरो।" बात काफी बढ़ गई थी। भला चन्द्रमा भी किसी के पीछे क्यों रहता! "तुमने मुझे क्यों शाप दिया है! देखो मैं भी तुम्हें क्या दंड देता हूँ! जब तक मैं भूलोक में मनुष्य के रूप में रहूँ तब तक तुम घोड़ा बनकर मुझे ढोते रहो।" शाप देकर, चन्द्रमा पुण्डरीक का शव लेकर उड़ गया।

चन्द्रमा और कपिंजल ने आपस में झगड़ कर एक दूसरे को शाप तो दे दिया था; पर महाश्वेता को पुण्डरीक का शव न मिल सका। इसलिए वह सतीव्रत न कर सकी। वह पुण्डरीक की पत्थर की प्रतिमा बना कर, रोज़ उस पर फूल चढ़ाकर उसकी पूजा करने लगी।

कपिंजल के शाप के कारण चन्द्रमा, भूलोक में राजकुमार के रूप में पैदा हुआ। वह कादम्बरी से विवाह न कर सका। उसका नाम चन्द्रापीड़ रख गया। पुण्डरीक क्योंकि महाश्वेता से बिना विवाह किये, जबरदस्ती मर गया था; इसलिए फिर उसका जन्म हुआ। जिस राज्य में चन्द्रापीड़ पैदा हुआ था, वह भी वहीं के मन्त्री

के लड़के के रूप में पैदा हुआ। उसका नाम वैशम्पायन रखा गया। उधर चन्द्रमा का चन्द्रापीड़ के रूप में पैदा होना था, कि इधर कपिंजल खड़ा खड़ा सहसा घोड़ा हो गया। जंगल में रहनेवालों ने सोचा—"यह घोड़ा बहुत सुन्दर है, यह मामूली घोड़ा नहीं दीखता। इसलिए इस घोड़े को युवराज को उपहार में देंगे।" वे उसे चन्द्रापीड़ को सौंप आये।

चन्द्रापीड़ को मन्त्री के लड़के वैशम्पायन से बड़ा स्नेह था। घोड़े के रूप में कपिंजल को चन्द्रापीड़ को ढोना तो पसन्द न था। परन्तु क्योंकि उसका परम मित्र पुण्डरीक वैशम्पायन के रूप में पैदा हुआ था और चन्द्रापीड़ के पास था, इसलिए उसको देखता देखता वह अपने कष्ट भूल जाता।

कुछ दिनों बाद, घोड़े पर सवार होकर चन्द्रापीड़ शिकार खेलने आया। साथ वैशम्पायन और उसके अन्य साथी भी गये। परन्तु जल्दबाज़ी में वे रास्ता भटक गये। सब इधर उधर बिखर गये। जंगल में एक गुफ़ा के दीखने पर, उस में क्या होगा यह जानने के लिए घोड़ा चन्द्रापीड़ को उसमें

ले गया। उस गुफ़ा में जाते जाते वे देवलोक पहुँचे और वहाँ उन्हें कादम्बरी दिखाई दी। क्योंकि चन्द्रमा चन्द्रापीड़ के रूप में पैदा हुआ था और उसका पहिले का आकार बदला न था, इसलिए कादम्बरी ने उसको आसानी से पहिचान लिया। चन्द्रापीड़ को कादम्बरी के बारे में कुछ याद न था। परन्तु उसके सौन्दर्य पर मुग्ध हो वह वहीं पर रह गया।

चन्द्रापीड़ की खोज में जब वैशम्पायन सारा जंगल खोज रहा था तो पुण्डरीक की प्रतिमा की पूजा करती महाश्वेता दिखाई

दी। उसको देखते ही वैशम्पायन को उससे शादी करने की इच्छा हुई और इस इच्छा को उसने उसके सामने व्यक्त भी किया।

महाश्वेता को यह न मालूम था कि वह पुण्डरीक ही था, जिससे पूर्व जन्म में उसने प्रेम किया था। उसने वैशम्पायन से कहा कि वह जिससे प्रेम करती थी वह मर गया था; पर वह उसके साथ सती न हो सकी थी। इसलिए जीवन भर उसकी प्रतिमा की पूजा करने का निश्चय कर लिया था, और इसी कारण वह किसी और से विवाह न कर सकती थी। यह जब वह कह रही थी तो उसने सिर नीचे ही कर रखा था। वैशम्पायन की ओर भूलकर भी न देखा।

"तुम जिस पुण्डरीक की पूजा कर रही हो, वह मैं ही हूं, महाश्वेता!"—वैशम्पायन कह सकता था, पर वह यह बात जानता न था। वह उसे छोड़कर जा भी न पाता था। वह उसको मनाने लगा—"मैं तुमसे प्रेम करता हूं, तुम मुझसे विवाह कर लो।" महाश्वेता को गुस्सा आ गया। उसने शाप दिया—"दुष्ट! तू एक प्रतिव्रता को क्यों इस तरह सता रहा है, और कहने पर नहीं जा रहा है! जा तू एक तोता हो जा और टहनी टहनी पर अपना रोना रोता फिर!" तुरन्त वैशम्पायन तोता बन गया। "महाश्वेता! मैं तुझे प्रेम करता हूं! प्रेम करता हूं!" चिल्लाता, चिल्लाता तोता जंगल में घूमने लगा और डाली डाली पर बैठकर यही बात कहने लगा।

और उधर देवलोक में, जहां चन्द्रापीड़ कादम्बरी के साथ था, उसको भूलोक, मां, बाप और साथी वैशम्पायन की याद आई। चन्द्रापीड़ कादम्बरी से बिना कहे झट घोड़े पर चढ़कर, गुफ़ा के रास्ते जंगल में आ गया। जो कोई उसे दीखता उससे वह पूछता—

"क्या तुम्हें वैशम्पायन दिखाई दिया था?" उसने मूर्ति की पूजा करती हुई महाश्वेता से भी यही पूछा। उसने बताया—"मैं नहीं जानती कि आपका वैशम्पायन कौन है। कोई आपको खोजता खोजता मेरे पास आया था और मुझे विवाह करने के लिए सताने लगा। मैंने तंग आकर शाप दे दिया कि वह तोता हो जाये।" "अरे! अरे, वही वैशम्पायन है।" कह कर उस तोते के लिए चन्द्रापीड़ सारा जंगल खोजने लगा।

घोड़े के रूप में पैदा हुए कपिंजल को महाश्वेता को यह कहने की इच्छा हुई कि वैशम्पायन ही पुण्डरीक है। पर घोड़ा तो बात नहीं कर सकता है न! चन्द्रापीड़ को ढोता ढोता, वह भी उस तोते की तलाश करने लगा। सारा जंगल खोज डाला, पर वह तोता कहीं न मिला।

उधर कादम्बरी चन्द्रापीड़ को वहाँ न पा दुःखी हो रही थी। आज आयेगा, कल आयेगा, यह सोच रोज वह उसकी प्रतीक्षा करती रहती। इस बीच उसे कपिंजल का शाप याद आया। न जाने चन्द्रापीड़ क्या हो गया हो, यह सोच वह देव लोक से उतरकर जंगलों में उसे खोजती खोजती आई। पर जब वह वहाँ पहुँची तो उसको उस शाप का परिणाम नजर आया, जो कपिंजल ने चन्द्रमा को दिया था।

वह चन्द्रापीड़ जो एक बार माँ-बाप और वैशम्पायन को देखकर वापिस चला आना चाहता था, तोते के रूप में बदले हुए वैशम्पायन को खोजता रहा। बहुत खोजा, पर वैशम्पायन कहीं न दिखाई दिया। अपनी प्रियतमा कादम्बरी और मित्र वैशम्पायन के बारे में सोचता एक दिन चन्द्रापीड़ महाश्वेता के आश्रम में गया, और

उसने वहीं अपने प्राण छोड़ दिये। उसके मरने के बाद, शव को देखकर कादम्बरी छाती पीट पीटकर रोने लगी। महाश्वेता की तरह उसने भी सती होने की सोची और उस के लिए वह तैयारी करने लगी।

इतने में वहाँ घूमता फिरता घोड़ा, क्यों कि चन्द्रपीड़ मर गया था और चन्द्रमा का शाप खतम हो गया था, यकायक कपिंजल के रूप में बदल गया।

रोते हुए कादम्बरी को देखकर कपिंजल को दया आई। उसने कहा—"कादम्बरी! दुखी मत हो। मैंने कहा था न कि चन्द्रापीड़ फिर जी उठेगा।" वह यह कह ही रहा था कि चन्द्रापीड़ फिर जी उठा।

कादम्बरी तो खुश हुई; पर उसको इसका दुःख बना रहा कि उसके कारण महाश्वेता अपने प्रियतम पुण्डरीक से विवाह न कर पाई थी। तब कपिंजल ने कहा—"जिस वैशम्पायन को तुमने तोता बना दिया था, वह अपना पुण्डरीक ही था। क्या अच्छा हो, अगर वह तोता मिल जाय।" तभी किसी जंगली ने आकर महाश्वेता को एक तोता दिया। वह तोता महाश्वेता को देखते ही बोल उठा—"महाश्वेता! मैं तुमसे प्रेम करता हूँ।" चन्द्रापीड़ भागा भागा उसके पास गया। "यही हमारा वैशम्पायन है" यों कह उसका उस पर हाथ रखना था कि वह वैशम्पायन के रूप में बदल गया और शाप-विमुक्त हो गया।

कपिंजल का तब से स्त्रियों के प्रति क्रोध जाता रहा। उसे यह जानकर बड़ा दुःख हुआ कि उसके क्रोध के कारण ही उन्हें इतने कष्ट सहने पड़े थे। वह बहुत पछताया।

बड़े-बूढ़े

एक गाँव में एक ब्राह्मण परिवार रहा करता था। ब्राह्मण की पत्नी बड़ी भोली भाली थी। हमेशा कुछ न कुछ ग़लती कर बैठती, और पति की डाँट सुनती। ब्राह्मण सदा सोचा करता कि कैसी मूर्ख पत्नी से उसका पाला पड़ा था। इसी अफ़सोस में उसके दिन कट रहे थे।

एक साल, गरमियों में उसने घर के लिए ज़रूरी चीज़ें—नमक, इमली, मिर्च अरहर की दाल, मूँग, उड़द—सभी कुछ लाकर घर में रख, अपनी घरवाली से कहा—"चैत्र, वैशाख आ रहे हैं, तब मैं बाहर जाना मुश्किल हो जाएगा। इसलिए सभी चीज़ें अभी लाकर दे दी हैं।"

उसकी पत्नी ने सोचा कि शायद चैत्र और वैशाख कोई व्यक्ति हैं। उसने कहा—"अच्छा"। वह तब से सोचने लगी कि कब चैत्र-वैशाख आते हैं, और कब वह उन्हें सब चीज़ें देती है। वह गली में बैठकर उनकी प्रतीक्षा करने लगी।

उस समय, ब्राह्मण को किसी काम पर दूसरे गाँव में जाना पड़ा। जाते जाते उसने पत्नी को बुलाकर कहा—"घर की चीज़ें ख़तम न कर देना। चैत्र-वैशाख आ रहे हैं।"

आस-पड़ोस के दो किसानों ने भी उसकी यह बात सुनी। वे भी जानते थे कि ब्राह्मण की पत्नी कतई बेअक़्ल थी। इसलिये ब्राह्मण के जाने के अगले दिन वे बेहंगी लेकर ब्राह्मण के घर पहुँचे। उन्होंने ब्राह्मण की पत्नी से कहा—"हम दोनों चैत्र-वैशाख हैं। तेरे पति ने कहा

श्री बालकृष्ण प्रसाद

था कि वे हमें आटा-दाल देंगे। हम लेने के लिए आये हैं!"

सीधी-सादी ब्राह्मण की पत्नी ने समझा कि वे सच ही कह रहे थे। उन दोनों को बेंच पर बिठा दिया। फिर सारी चीज़ें उनको देकर उनको विदा किया।

चार दिन बाद ब्राह्मण आया। पति को घर के बाहर देखते ही, पत्नी ने कहा—"आप कह गये थे न कि चैत्र-वैशाख आयेंगे! वे आये थे। मैंने सोचा कि उनको आपके आने तक बिठाना बेकार है, इसलिए जो चीज़े आप उनके लिए लाये थे, उन्हें देकर मैंने भेज दिया।"

ब्राह्मण भौंचक्का था। "आग तेरी अक़्ल। चैत्र-वैशाख क्या हैं और उनका घर में आना क्या है! चैत्र-वैशाख महीनों के नाम हैं। उन महीनों में गरमी पड़ती है, इसलिए मैंने कहा था कि चैत्र वैशाख आ रहे हैं और तूने यह काम किया है। उसने उसे खूब डाँटा-डपटा।"

* * *

दिन गुज़रने लगे। पर कोई ऐसा दिन न गुज़रता, जब पत्नी को पति से खरी-खोटी न सुननी पड़ती। ब्राह्मण पत्नी से तंग आ गया। वह कोसता—"क्योंकि घर में कोई बड़े-बूढ़े नहीं हैं, इसलिए ही तेरी अक़्ल खाक हो गई है। अगर घर में बड़े लोग हों तो तेरी करतूतें ऐसी न होंगी।"

यह सुनते ही ब्राह्मण की पत्नी सोचने लगी कि यह "बड़े-बूढ़े" क्या बला है! उसने सोचा कि अगर उसने जैसे-तैसे कहीं से "बड़े-बूढ़े" पा लिये तो कम से कम पति की डाँट-फटकार से तो बच सकेगी! तब से जो कोई घर में आता

जाता, वह उनसे कहती—"अच्छा होता अगर हमारे घर में कोई "बड़े-बूढ़े" होते।

यह जानकर एक ने ब्राह्मण की पत्नी को धोखा देने की ठानी। वह एक टोकरी मिट्टी के खिलौने रख कर, ब्राह्मण के घर के सामने चिल्लाता गुजरा...."बड़े-बूढ़े ले लो, बड़े-बूढ़े ले लो।" यह सुनते ही ब्राह्मण की पत्नी की जान में जान आई। उसने तुरत उसको बुलाकर भाव-सौदा किया। उसने कहा कि एक "बड़े-बूढ़े" की कीमत दो सौ रुपये हैं।

"अरे बापरे बाप! मैं दो सौ रुपये कहाँ से लाऊँगी! चाहो तो मेरे गले का सोने का हार ले जाओ।"

उस आदमी ने कहा—"अच्छा, तो दे दो।" उसने वह बढ़िया हार ले लिया और एक "बड़े-बूढ़े" को देकर चला गया।

जब यह बात हो रही थी तो घर में ब्राह्मण न था। ब्राह्मण की पत्नी "बड़े-बूढ़े" को सजाकर, फूल चढ़ाकर, उसकी पूजा कर रही थी कि ब्राह्मण इस बीच में वापस घर आ गया। ब्राह्मण की पत्नी ने अपने पति से कहा—"आप रोज़ कोसा करते थे कि घर में कोई बड़े-बूढ़े नहीं हैं। मैंने अपने गले का हार देकर एक 'बड़े-बूढ़े' को खरीद लिया है।" उसने 'बड़े-बूढ़े' का खिलौना दिखाया।

ब्राह्मण को काटो तो खून नहीं। वह चिल्लाने लगा—"अरी बेअक़्ल, निगोड़ी....! बढ़िया सोने का हार देकर तूने यह मिट्टी का खिलौना खरीदा है। अब तू इस घर में एक क्षण नहीं रह सकती। जा निकल यहाँ से। ले जा अपने "बड़े-बूढ़े" को।" उसने पत्नी को बाहर निकाल दिया।

बिचारी ब्राह्मण की पत्नी क्या करती! वह अपनी बे-अक़्ली पर अपने को कोसने-

कुदने लगी। वह "बड़े-बूढ़े" को लेकर मायके के लिए निकल पड़ी।

जाते जाते रास्ते में जंगल आया। अन्धेरा हो गया। तब वह एक पेड़ पर चढ़कर बैठ गयी।

आधी रात के समय ठीक उसी पेड़ के नीचे कुछ चोर आकर चोरी के माल का बँटवारा करने लगे। उनको देखते ही ब्राह्मण की पत्नी के हाथ-पैर काँपने लगे। उसके हाथ का "बड़े-बूढ़े" फिसलकर चोरों के बीच में गिर पड़ा।

उस अन्धेरे में किसी चीज़ के यकायक पड़ने पर चोर घबरा गये। उन्होंने सोचा कि कोई भूत वहाँ है! सब चोरी का माल वहाँ छोड़ छाड़कर वे चम्पत हो गये।

सवेरा हुआ। ब्राह्मण की पत्नी पेड़ पर से उतरी। चोरों के छोड़े हुए, गहने-जवाहरात, सोना-चान्दी लेकर उसने एक पोटली बाँधी, और "बड़े-बूढ़े" को लेकर वह अपने पति के घर की ओर चली।

उसने सारी घटना पति को सुनाकर कहा—"यह सब मेरे खरीदे हुए "बड़े-बूढ़े" की महिमा है। यह सच है कि मेरी वजह से आपका बहुत प्रकार से नुक़सान हुआ है। परन्तु मैंने उससे चौगुना लाकर दे भी दिया है।" उसने चोरी का माल दिखाया। ब्राह्मण बड़ा खुश हुआ। तब से वे आपस में सलाह-मशविरा करके आराम से रहने लगे।

इसमें चाहे किसी की भी बुद्धिमत्ता हो पर सच तो यह है कि शुभ समय में ही "बड़े-बूढ़े" खरीदा गया था। तभी से भाग्य उनका साथ देने लगा। कहते हैं बुद्धि भाग्य की अनुसारिणी होती है।

एक गाँव में एक ग्वाले का लड़का रहा करता था। वह गौओं को सवेरे चराया करता और दोपहर को आराम के लिए उनको एक पीपल के पेड़ के नीचे हाँक कर ले जाता।

कई दिनों तक वह यही करता रहा। फिर एक विचित्र घटना घटी। जब वह एक दिन पीपल के नीचे बैठा आराम कर रहा था तो उसे लगा जैसे पीपल का पेड़ कह रहा हो—"बेटा! एक बात सुनो। अगर तुमने मेरी जड़ में रोज़ दूध दिया तो तुम्हारा बड़ा भला होगा।" यह सुनकर उसे बड़ा ताज्जुब हुआ और तब से वह गौओं का दूध दुहकर, पेड़ की जड़ में डालने लगा।

वह कई दिनों तक, नियमपूर्वक दूध जड़ में देता रहा। फिर यकायक वहाँ की ज़मीन फटी और उसमें से एक साँप फण उठाकर, फुँकारने लगा। यह देखकर वह लड़का घबरा गया।

"बेटा! तुम डरो मत। कोई डरने की बात नहीं है। कुछ दुष्ट बिना किसी कारण के गढ़ा खोदकर मुझे यहाँ दबा गये थे। मेरी मरने की नौबत आ गई थी। परन्तु तुम्हारे दूध के कारण फिर जान आ गई। भले ही कितने जन्म लूँ, पर क्या तुम्हारा ऋण कभी मैं चुका सकूँगा? फिर भी इसके बदले में तुम्हें एक वर देना चाहता हूँ। तुम ज़रा मेरे पास आओ।" कहकर साँप ने उसको बुलाया।

उसके पास आते ही सिर पर फूँककर उसने आशीर्वाद दिया—"बेटा! मेरी महिमा के कारण तुम्हारे सिर के बाल सोने के हो जाएँगे। इसके कारण तुम्हें एक

श्री कैलाशचन्द्र गुप्ता

सुन्दर स्त्री मिलेगी। फिर जो तुम सोचोगे वही होगा। तुम सौभाग्यशाली हो जाओगे। जाओ, यह मेरा आशीर्वाद है।" साँप ने खबरदार करते हुए कहा—"इस वर के बारे में ज़रा, खुद किसी को भी कुछ नहीं मालूम होना चाहिए। यहाँ तक कि तुम्हारी सुन्दर पत्नी को भी इस बारे में न मालूम हो। अगर उसको इस बात का पता लग गया तो तुरंत वर का प्रभाव जाता रहेगा"। ग्वाले का लड़का यह मान गया और खुश हो घर चला गया।

* * *

एक बार जब ग्वाले का लड़का, नहा-धोकर शरीर पोंछ रहा था कि चमचमाता बारह अँगुल का एक सुनहला बाल उसके सिर से झड़ गया। उसकी खुशी का हद न थी। उसने एक पत्ते का दोना बनाकर, बाल को उसमें रख, नदी में छोड़ दिया। वह दोना नदी में बहता हुआ चला गया।

नीचे, नदी में कोई राजकुमारी नहा रही थी। उसको ग्वाले के लड़के का छोड़ा हुआ दोना मिला। जब उसने दोना खोला तो उसको बारह अँगुल का चमचमाता सोने का बाल दिखाई दिया।

उसने अपने पिता के पास जाकर कहा —"पिताजी! मैं एक ऐसे लड़के से ही विवाह करूँगी जिसके बाल इस तरह सोने के हों; नहीं तो मैं विवाह ही नहीं करूँगी आजन्म कुँवारी रहूँगी।"

यह सुन राजा और रानी को बड़ा आश्चर्य हुआ। सोने के बालवाले लड़के की तलाश के लिए नौकर-चाकरों को सब तरफ़ भेजा। पर उन्हें कहीं भी वैसा लड़का नहीं मिला। वे वापिस आ गये। फिर गुप्तचरों को चारों कोनों में भेजा

गया। वे भी निराश हो वापिस चले आये। फिर उन्होंने बड़े-बड़े, सिद्ध साधुओं को हर देश में भेजा। वे भी वापिस आ गये। खोज का कोई फ़ायदा न हुआ।

आखिर एक तोते ने कहा—"महाराज! सोने के बालवाले लड़के को मैं ढूँढ़कर लाता हूँ....पर यह काम किसी मनुष्य के लिए सम्भव नहीं है। मैं ही कर सकता हूँ। मुझे पिंजरे में से छोड़ दीजिये। मैं उस लड़के को खोजकर ले आऊँगा। आप भी मेरी अक़्लमन्दी को देखना।"

तुरन्त तोते को पिंजड़े में से छोड़ा गया। उसे खूब खिला-पिलाकर भेज दिया गया। वह नदी-पहाड़ पार कर, जंगल में गया। उसने वहाँ ग्वाले के लड़के को देखा। तब पता है, उसने क्या किया? वह एक एक पशु के ऊपर से फुदकता गया और कुछ दूरी पर बैठे ग्वाले के लड़के को उसने देखा। फिर झपटकर उसके हाथ से बाँसुरी चोंच में लेकर पेड़ पर जा बैठा।

ग्वाले का लड़का, बाँसुरी के लिए तोते के पीछे चलने लगा। वह एक पेड़ से दूसरे पेड़ पर, दूसरे से तीसरे पेड़ पर होता, राजकुमारी के अन्तःपुर की ओर जाने लगा। और ग्वाले के लड़के की यह हालत थी कि वह अपने गौओं को भूल गया था। वह तोते के पीछे पीछे अन्तःपुर में घुसा।

तोता खुशी में था कि उसका काम खतम हो गया है। वह सीधे राजकुमारी के पास गया और उसकी गोदी में बाँसुरी फेंक कर उड़ गया।

ग्वाले के लड़के ने राजकुमारी से बाँसुरी देने के लिए कहा। राजकुमारी ने तब कहा—"अगर तुम मुझ से शादी करोगे तो दे दूँगी, नहीं तो नहीं दूँगी।" उसे

यह सुन बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने पूछा—"बिना सगाई-स्वयंवर के विवाह कैसे किया जा सकता है!"

"सगाई और स्वयंवर सभी उसी दिन हो गये थे जिस दिन नदी में मुझे वह दोना मिला था।" कहते हुए उसने वह दोना दिखाया।

तब उसको याद आया कि यह सब उस साँप के दिये हुए वर की महिमा थी। इसलिए वह विवाह के लिए मान गया। थोड़े दिनों में उनका बड़े धूम-धाम से विवाह भी हो गया। राजा ने न केवल विवाह में अपनी लड़की ही दी, परन्तु उसे अपना आधा राज्य भी दे दिया।

भाग्य उसके साथ था। ग्वाले का लड़का आराम से ज़िन्दगी बसर कर रहा था। कुछ दिनों बाद, उसको जंगल में छोड़ी हुई अपनी गौओं का ख्याल आया। जब उन्हें देखने वह जा रहा था, तो उसकी पत्नी ने भी कहा कि वह उसके साथ जाएगी।

जब दोनों मिलकर जंगल में गये तो गौओं के झुण्ड में एक भी जिन्दा न थी, सब मरी पड़ी थीं। परन्तु साँप का दिया हुआ दूसरा वर उसको याद आ गया। तब उसने मन में चाहा कि "मेरी गौएँ फिर जी उठें।"

तुरन्त गौएँ पूँछ हिलाती हिलाती उठ खड़ी हुईं। वह बड़े सन्तोष से, गौओं के उस झुण्ड को अपनी राजधानी में हाँक ले गया।

इस संसार में अच्छी नीयतवालों का और जो अपना वचन पूरा करते हैं, उनका हमेशा भला ही होता है।

अपने बच्चों से !

श्री देवप्रकाश गुप्त, जमालपुर (बिहार)

कल के गांधी
तूफ़ां - आंधी
तुझसे पाठ जलन का लेकर बढ़े दीप का कारवां !

कहीं न रुकना
तनिक न झुकना
आशीर्वाद तुम्हें देने को सिर पर बिखरा आसमां !

छू लो मञ्जिल
रहना हिल-मिल
तुम्हीं देश की फुलवाड़ी का एक सलौना बागवां !

मिहनत, सोना
इसे न खोना
आज उतारो तुम नक़ाब तूफ़ां का, तेरा इम्तहां !

मेरे प्यारे
रहो दुलारे
सचमुच तभी जमाना दुहरायेगा तेरी दास्तां !

असफल साधना

हठी विक्रमार्क, पेड़ के पास फिर गया। शव को उतार, कन्धे पर डाल, श्मशान की ओर चल पड़ा। तब शव में स्थित वेताल ने कहा—"राजा! तुम्हें इस समय मोटे गद्दों पर आराम से सोना चाहिये था। मालूम नहीं तुम क्यों उपासक की तरह इतनी मेहनत कर रहे हो! साधना हमेशा सफल नहीं होती। यह दिखाने के लिए मैं तुम्हें एक विचित्र कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" उसने यह कहानी सुनानी शुरु की।

किसी ज़माने में, चन्द्रप्रभु उज्जयिनी नगर का राजा था। देवस्वामी नाम का एक ब्राह्मण उसका मन्त्री था। वह बहुत धनी था। उसके एक लड़का था, जिसका नाम चन्द्रस्वामी था। वह छुटपन में तो खूब पढ़ता-लिखता रहा, पर बड़े होते ही

वेताल कथाएँ

जुआरी हो गया। सिवाय दिन-रात जुआ खेलने के उसे और कुछ न सूझता।

एक बार जब वह गली में जा रहा था, तो उसको जुए की एक दूकान दिखाई दी। जुआ खेलनेवालों का होहल्ला सुन, वह भी वहाँ घुसा और उनके साथ खेलने लगा। दुर्भाग्य से न केवल वह अपना ही धन खो बैठा, अपितु वह औरों से उधार भी ले बैठा।

यही उसका नित्य प्रति दिन का कार्यक्रम था। दो-एक दिन के बाद उन्होंने अपना रुपया माँगना शुरू किया। वे यह नहीं जानते थे कि वह कौन था। अगर वह यह कहता कि वह मन्त्री का लड़का था तो शायद वे उसे पैसे के लिए न सताते। अगर यह बात उसके पिता को मालूम हो जाती कि वह जुआ खेल रहा था तो उसकी और उसके पिता की मान-प्रतिष्ठा मिट्टी में मिल जाती; इसलिये बिना कुछ कहे सिर नीचा करके चन्द्रस्वामी बैठ गया।

जुआरियों को गुस्सा आ गया और उन्होंने लाठियों से उसकी अच्छी मरम्मत कर दी। चन्द्रस्वामी बेहोश होकर गिर गया। दूकानदार रात होने तक देखता

रहा। पर चन्द्रस्वामी वहां से न हिला। दुकानदार को डर लगा कि कहीं वह मर न गया हो। इसलिये उसने आधी रात में अपने नौकरों को बुलाकर कहा—"सवेरा होने से पहिले—जंगल में किसे पुराने कुएँ में इसे डालकर आओ।" नौकर चन्द्रस्वामी को ढोकर अन्धेरे में ही जंगल गये। बहुत दूर गये; पर उन्हें न कोई पुराना कुआं ही मिला, न गढा ही, और कदम कदम पर मुर्दे का भार बढ़ता-सा लगता था।

"इस मुर्दे को और कितनी दूर ले जाना होगा! यहां कोई कुआं नहीं है। हम इसे यहीं छोड़ देते हैं और मालिक से जाकर कह देंगे कि कुएँ में फेंक दिया है।" नौकरों ने आपस में यों तय कर लिया और उसको जंगल में एक जगह फेंक वे वापिस मालिक के पास चले गये।

तुरत चन्द्रस्वामी उठा। परन्तु चोटों के कारण सारा शरीर लहू-लुहान था। वह कराहता कराहता, जैसे तैसे चलता चलता सवेरे एक योगी के आश्रम में पहुँचा। योगी ने उसे देखते ही कहा—"आओ बेटा। बहुत दुबले हो गये हो! आओ मैं तुम्हें तुम्हारे मन के मुताबिक भोजन दूँगा।" चन्द्रस्वामी यह सोच आश्चर्य करने लगा कि उस जंगल में, वह उसके मन के मुताबिक भोजन कैसे देगा।

उस योगी को कई सिद्धियाँ पास थीं। उसने एक शक्ति को बुलाकर कहा—"इस अतिथि का आतिथ्य करो।" तुरत चन्द्रस्वामी के चारों ओर एक सोने का शहर बन गया। उसको सामने एक बड़ा महल दिखाई दिया। उस महल में से कई स्त्रियों ने आकर कहा—"आइये, पधारिये।" उसकी अगवानी की।

वह उनके साथ गया। उन्होंने उसको नहला-धुलाकर, उसको पहिनने के लिए

अच्छी पोशाक दी। उसके शरीर पर इत्र आदि लगाये। फिर उसको बहुत अच्छा भोजन परोसा। उसके साथ एक बहुत सुन्दर स्त्री ने भी बैठकर भोजन किया। भोजन करने के बाद, चूंकि वह बहुत थका हुआ था, इस लिए मोटे मोटे गद्दों पर लेटते ही उसे नींद आ गयी। थकान मिटने पर फुरसत से उस स्त्री से बातचीत करने की उसने ठानी थी।

परन्तु जब वह उठा तो उसके सामने योगी की कुटिया थी और चारों ओर घना जंगल था। न नगर था, न स्त्रियाँ थीं और न महल ही थे। योगी ने उसके पास आकर पूछा—"क्यों बेटा! आतिथ्य में तो कोई कमी न थी? सब कुछ ठीक था न?"

"आपकी कृपा से सब कुछ आराम से हो गया। परन्तु मैंने एक सुन्दर युवती को देखा था। उनसे मिलने की मेरी बड़ी इच्छा हो रही है।"—चन्द्रस्वामी ने कहा।

"पगले! जो तुमने देखा था, क्या तुम्हें वह सच लगा था? वह मेरी सिद्धि के प्रभाव द्वारा तैयार किया हुआ भ्रम-मात्र था।"—योगी ने कहा।

"ऐसी बात है तो मुझे भी कृपया वह सिद्धि सिखाइये महानुभाव!"—चन्द्रस्वामी ने योगी से प्रार्थना की।

"बेटा! वह सिद्धि आसानी से नहीं पाई जाती। तुम इसके लिए यत्न नहीं कर सकते। इसके लिए पानी में डूबकर तपस्या करनी होती है। जब साधक यह तपस्या कर रहा होता है तो माया उसे घेर लेती है, जैसे वह फिर पैदा हुआ हो और बचोंवाला हो गया हो। वह सब सच जान वह अपनी साधना छोड़ देता है। इस तरह जो तीस वर्ष तक उस भ्रम में ही अपना जीवन व्यतीत करता है; और उस भ्रम में ही अग्नि-प्रवेश करता है, वह साधक

ही यह सिद्धि प्राप्त कर पानी से बाहर आता है। ऐसे साधकों के सिवा दूसरे लोगों को यह सिद्धि नहीं मिलती। इस लिए तुम अपना इरादा बदल लो।"

चन्द्रस्वामी ने हठ करते हुए कहा—"नहीं....मैं यह सिद्धि प्राप्त कर लूँगा।"

"अगर तुम्हारी साधना सफल न हुई, तो तुम्हें सिद्धि न मिलेगी, और मेरी सिद्धि भी जाती रहेगी—" योगी ने उसको सावधान किया।

"मैं आपको किसी प्रकार की हानि न होने दूँगा।"—चन्द्रस्वामी ने कहा।

योगी क्या करता! सिद्धि देने का निश्चय कर उसने कहा—"अच्छा! तुम्हारे पानी में डूबने के बाद, जब अग्नि प्रवेश का समय आयेगा, तब मैं तुम्हें बताऊँगा। तब तुम निस्संकोच अग्नि-प्रवेश करो। अगर तब तुम भूल गये कि यह भ्रम है कम से कम मेरे याद दिलाने पर उसे याद कर लेना।" चन्द्रस्वामी योगी की यह बात भी मान गया।

फिर योगी ने स्वयं स्नान किया और चन्द्रस्वामी को भी नहलाया। उसको एक मन्त्र सिखलाकर, उससे पानी में डूबकर वह मन्त्र जपने के लिए कहा।

योगी के कहने के अनुसार सब हो गया। चन्द्रस्वामी को लगा, जैसे वह किसी ब्राह्मण के घर पैदा हुआ हो। वह बड़ा होता गया। उसका उपनयन हुआ और वह विद्याभ्यास करने लगा। उसकी शादी हुई। बच्चे पैदा हुए। वे भी बड़े होने लगे। बीबी-बच्चों के साथ उसका जीवन आराम से गुज़रने लगा।

इतने में चन्द्रस्वामी को गुरु की आवाज़ सुनाई दी। उसे याद हो आया कि वह सिद्धि के लिए साधना कर रहा था। अब अग्नि-प्रवेश करना था। उस भ्रम में ही वह अग्नि प्रवेश के लिए तैयार हो गया। परन्तु उसके बन्धु बान्धव, बड़े-बुज़ुर्ग, पत्नी-पुत्र उसके चारों ओर खड़े होकर बुरा-भला कहने लगे—"नहीं नहीं! मत घुसो।" वह डर गया। उसने सोचा—"अगर मैं मर गया तो इन सब का क्या होगा!" उसको योगी के अग्नि प्रवेश वाली बात याद आ गई। उसे सन्देह होने लगा कि उन्होंने जान बूझकर कहा था या बिना जाने ही। उसको यह समझ में नहीं आया। परन्तु आखिर चन्द्रस्वामी दिल पक्का करके अग्नि में घुस ही गया। पर अग्नि जली नहीं। चन्द्रस्वामी पानी से बाहर निकलकर

खड़ा हो गया। उसका सारा भ्रम जाता रहा। योगी किनारे खड़ा हुआ दिखाई दिया।

चन्द्रस्वामी ने योगी के पास आकर नमस्कार करके कहा—"स्वामी! मैंने सब कुछ आपके कथनानुसार कर दिया है। परन्तु जब मैंने अग्नि में प्रवेश किया तो अग्नि ठंडी क्यों थी?"

"तुमने कोई ग़ल्ती की है। अग्नि ठंडी कैसे हो सकती है!"—योगी ने पूछा।

"मैंने ठीक वैसे ही किया जैसे कि आपने बताया था।"—चन्द्रस्वामी ने कहा।

"अभी सच मालूम कर लेते हैं।" उसने अपनी सिद्दि का उपयोग किया। पर सिद्दि का कोई फल न हुआ। योगी की आँखों में आँसू छलछलाने लगे—"तुम्हें तो सिद्धि मिली नहीं, मेरी भी चली गई।" बेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा।—

"चन्द्रस्वामी ने सब कुछ ठीक ही किया था। फिर उसे सिद्धि क्यों नहीं मिली? गुरु की सिद्धि क्यों चली गई? मैं इस सन्देह को दूर न कर सका। अगर तुमने जान बूझकर मेरा सन्देह दूर न किया तो तुम्हारा सिर फोड़ दूँगा।"

"तुम मुझसे बुलवाने के लिए यह पूछ रहे हो! नहीं तो इसमें सन्देह की गुन्जाइश ही कहाँ है! चन्द्रस्वामी, यह जानकर कि उसका भ्रम सच है अग्नि में प्रवेश करने के लिए हिचकिचाया था; इसीलिये उसको सिद्धि न मिली। अपात्र को विद्या देने के कारण गुरु की सिद्धि भी जाती रही इसके सिवाय कोई दूसरा कारण नहीं है।" विक्रमार्क ने बेताल से कहा।

राजा का इस प्रकार मौन-भंग होते ही बेताल शव के साथ, फिर पेड़ पर जा बैठा।

कीड़े - मकोड़े

इस संसार में ६ लाख कीड़े-मकोड़े हैं। इनमें एक एक जाति में अनगिनित उपजातियां हैं। कीड़े और जन्तुओं में मुख्य भेद यह है कि कीड़ों के शरीर के तीन भाग होते हैं—उनके छे पैर होते हैं, दो दो मूँछें होती हैं।

चीटियां, मक्खियां, मच्छर, दीमक, तितली, जुगुनू—झींगुर, पतंगे ततैय्या टिड्डे, भौंरे, खटमल, जूं, आदि, परिचित कीड़े-मकोड़े हैं।

कई प्रकार के कीड़े-मकोड़े हमारी मदद भी करते हैं। रेशम के कीड़ों से हमें रेशम मिलता है, शहद की मक्खियां फूलों से शहद निकालकर हमें शहद देती हैं। इसलिये हम इन कीड़ों को पालते हैं।

कई कीड़े ऐसे भी हैं, जिनके पंख नहीं होते; कई ऐसे हैं, जिनके दो पंख हैं। कई ऐसे भी हैं, जिनके चार चार पंख होते हैं। ये तरह तरह की चीजें खाती हैं। मिट्टी से छत्ता बनाकर, ततैय्या रहते हैं।

वे अपने बच्चों के लिये मकड़ियां मारकर लाते हैं, पर स्वयं फूलों से शहद चूसते हैं। कीड़े-मकोड़े दूसरी जाति के कीड़ों को तो खाते ही हैं, कई अपनी जाति के कीड़ों को भी खाते हैं। मादा टिड्डी का नर मादा को खा जाना अन्याय ही है!

पत्थरों में आकृति

पुराने जन्तुओं के बारे में हम कैसे जानते हैं ? इन के बारे में जानने के लिये हमारे पास कोई न कोई तो आधार होगा। मान लीजिये कि आपके पैदा होने से पहिले आपके परदादे का दादा मर गया होगा। अगर उनका कोई फोटो हो तो आप उसे देखकर कहेंगे—"तो वे ऐसे थे !" और उनको पहिचान लेंगे।

अब क्या है ! इसी प्रकार हम भी पुराने जन्तुओं के बारे में पता लगा सकते हैं। हाँ, पत्थरों में हमें उस समय के जन्तुओं का फोटो दिखाई देता है। परन्तु उन्हें "फोटो" नहीं कहा जाता, "फोसिल्स" कहा जाता है।

हम जो पत्थर देखते हैं वे पत्थर नहीं हैं, जो सृष्टि के आदि में थे। भूमि पर हमेशा नये नये पत्थर पैदा होते रहते हैं। वर्षा के होने पर पत्थर चूर चूर होकर नदी के सहारे समुद्र में जाकर जमा हो जाते हैं। इस तरह गये हुए पत्थर ऊपर के दबाव के कारण फिर पत्थर के रूप में आ जाते हैं।

पुरातन जन्तुओं का रूप फोसिल्स से मालूम किया जा सकता है। और उन पत्थरों के काल से यह जाना जा सकता है कि वे कितने वर्ष पहिले इस भूमि पर रहा करते थे। इस तरह के अनुमान के कारण हम यह जान सकते हैं—कि "ट्रैलबोट" ९० करोड़ वर्ष पहिले जीवित था और बड़ी बड़ी छिपकलियाँ साढ़े तीन करोड़ वर्ष पहिले जीवित थीं, आदि आदि।

पर्वत श्रृंखला

पर्वत श्रृंखलाएँ भूमि के सभी भागों में नहीं हैं। कहीं कहीं फैली हुई हैं। ये भूमि की सतह से बहुत ऊँची होती हैं। कहा जाता है कि एक समय में उनके पंख थे और वे उड़ा करते थे, इन्द्र ने उनके पंखों को काट दिया था; इसलिये वे नीचे गिर गये। पर यह सब सच नहीं है। केवल एक पौराणिक कथा-मात्र है।

यह सब जानते हैं कि पर्वतों में पत्थर होते हैं। परन्तु उन पत्थरों की परीक्षा करने से एक विचित्र बात मालूम होती है। वह यह कि वे कोई अखंड शिलाएँ नहीं हैं। वे समुद्र की तह में, एक एक परत करके जम गये थे, और पानी के दबाव से वे जमकर पत्थर हो गये थे। इसका प्रमाण यह है कि इन पत्थरों में अब भी आदिम जलचरों के अस्थिपंजर मिलते हैं।

इससे यह साफ़ हो जाता है कि पर्वत कहीं आकाश से नहीं टपक पड़े हैं। परन्तु नीचे से ही ये ऊपर आये हैं। क्योंकि भूमि पर दबाव दो तरफ़ से पड़ता है, इसलिये भूमि का मध्य भाग शिकनों की तरह ऊपर उठता है। पर्वत श्रृंखलाएँ सब इसी तरह पैदा हुई हैं। ७ करोड़ वर्ष पहिले हिमालय पर्वतों ने इस तरह उठना शुरू किया। हो सकता है कि वे अब भी ऊपर उठ रहे हों।

भूमि की सतह पर जब एक प्रकार का मथन-सा होता है, तभी पर्वत पैदा होते हैं। हिमालय के निर्माण के लिये, जो भूमि में संचलन हुआ उसी के परिणामस्वरूप, अमेरीका में रोकी, उत्तर अफ्रीका में आटलस, आदि, पर्वत बने।

पर्वत हमेशा एक जैसे भी नहीं रहते। वर्षा में वे कुछ घिस-से जाते हैं। घिसे हुए पर्वत, पत्थरों में टूटते हैं, पत्थर रेत में, और रेत मिट्टी में बदल नदी के पानी में बह समुद्र में जाता है, और समुद्र की तह में जम जाता है। इस तरह कालान्तर में समुद्र की तह से नये पर्वतों की उत्पत्ति होती है।

हिमालय के बनने के करोड़ों वर्ष पहिले बने पर्वत अब भी कहीं कहीं दिखाई देते हैं। इन पर्वतों में जलचरों की हड्डियाँ नहीं दिखाई देतीं। कहीं कहीं वे अखंड शिला के रूप में भी पाई जाती हैं।

दीप जल उठे !

श्री कपिल, बम्बई - १

★

जगमग जगमग दीप जल उठे
धरती माँ मुस्कायी रे !
तम की बदली चीर ज्योति ने,
जय की बीन बजायी रे !

मिट्टी उगल रही है सोना,
दमक रहा हर कोना कोना,
देख भूमि की दीपावलि को,
तारावली लजायी रे !
जगमग जगमग दीप जल उठे,
धरती माँ मुस्कायी रे !

चारों ओर हर्ष है बिखरा,
सब कुछ ही लगता है निखरा,
बदल गयी रंगत घर घर की,
सज्जा खूब सजायी रे !
जगमग जगमग दीप जल उठे,
धरती माँ मुस्कायी रे !

बालक छुटा रहे फुलझड़ियाँ,
आलोकित हैं सारी गलियाँ,
धूमधाम आतिशबाजी की,
मन को अति ही भायी रे !
जगमग जगमग दीप जल उठे,
धरती माँ मुस्कायी रे !

पूजन में हैं सभी लग रहे,
खील बताशे विहंस चख रहे,
देवि लक्ष्मी के दर्शन की,
सब ने आस लगायी रे !
जगमग जगमग दीप जल उठे,
धरती माँ मुस्कायी रे !

तम की बदली चीर ज्योति ने,
जय की बीन बजायी रे !

बताओगे ?

१. स्वेज नहर कहाँ है? यह किन समुद्रों को मिलाती है और कितनी लम्बी है?

२. 'केप आफ़ गुड होप' कहाँ है?

३. भारत को नये प्रान्तों में विभाजित करने के लिए आवश्यक विधायक लोक सभा में पास हो गया है?

४. उस हालत में आन्ध्र की राजधानी कहाँ होगी?

५. कील नहर कहाँ है?

६. क्या उत्तर प्रदेश की सीमाओं में भी कोई परिवर्तन हुआ है?

७. भारत में आम चुनाव कब होगा?

८. क्या २१ वर्ष से छोटे बच्चों को मत देने का भारत में अधिकार प्राप्त है?

९. २१ वर्ष से बड़ी स्त्रियाँ मत दे सकती हैं कि नहीं?

१०. भारत का एक ऐसा प्रान्त बताओ, जिसमें विधान सभा के लिए निर्वाचन नहीं होगा।

पिछले महीने के 'बताओगे?' के प्रश्नों के उत्तर

१. कच्छ।

२. हैदराबाद में। 'राष्ट्रपति निलयम'

३. प्रशान्त महासागर में।

४. नहीं।

५. रूस में।

६. करनल नासर।

७. हाँ! ट्रावनकोर-कोचीन में।

८. अणुशक्ति के निर्माण में।

९. हाँ। भारत में वैज्ञानिकों ने इसके लिये आवश्यक उपकरण भी तैयार किये हैं।

१०. महात्मा गान्धी।

मूर्ख शेर

जब एक पिता और पुत्र जंगल में जा रहे थे तो अन्धेरा हो गया। रात को वे एक झील के किनारे सो गये। जंगल घना था। तिसपर अन्धेरा था। इसलिये लड़का अपने पिता के पेट पर अपना सिर छुपाकर सो गया।

जब वे गाढ़-निद्रा में थे तो उस तरफ़ एक शेर आया। उसे ऐसा लगा कि कोई चार हाथ, चार पैरवाला जानवर सो रहा था। इस अजीब बात के बारे में उसने अपने दोस्त मगर से जानना चाहा। वह झील के पास गया।

सब सुनकर मगर ने कहा—"तुमने ठीक तरह नहीं देखा होगा। ढूँढो। एक को तुम खा लेना, और दूसरे को पानी में गिराना, उससे मैं पेट भर लूँगा।"

शेर किनारे पर आकर पिता का सिर सूँघने लगा। शेर की मूँछें पिता की नाक पर लगीं। वह तुरत ज़ोर से छींका। शेर घबराकर झील में गिर गया और मगर ने अनजाने उसको खा भी लिया।

बड़ा कौन है?

हिमालय के पहाड़ों में एक बहुत पुराना बड़ का पेड़ था। उस पर एक चकोर पक्षी और बन्दर रहा करते थे और पेड़ के नीचे एक हाथी। तीनों एक जगह रहते थे, पर उन में हमेशा खटपट बनी रहती।

आखिर उन्होंने निश्चय किया कि जो कोई उनमें सबसे बड़ा होगा, वे उसका कहा मानेंगे। पर यह कैसे पता लगाया जाय कि उम्र में सब से बड़ा कौन है?

"जब मैं होश सम्भाला तो इस पेड़ की चोटी मेरे पेट तक आती थी।" हाथी ने कहा।

"मैं पृथ्वी पर बैठे इसके कोमल पत्ते खाया करता था।" बन्दर ने कहा।

"यहाँ से कुछ दूरी पर एक और बड़ का पेड़ है। उसके फल खाकर मैंने यहाँ बीट कर दी थी। उसी में से यह पेड़ पैदा हुआ।" चकोर ने कहा।

उस दिन से हाथी और बन्दर चकोर की बात सुनने लगे।

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

जनवरी १९५७ :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें।

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिख कर निम्नलिखित पते पर ता. ५ नवम्बर के अन्दर भेजनी चाहिये।

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन
वडपलनी :: मद्रास-२६

नवम्बर – प्रतियोगिता – फल

नवम्बर के फ़ोटो के लिये निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं। इनके प्रेषक को १० रु. का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो :
"क्यों रूठे हो दीवाली पर?
मेरी भाँति हँसो-हँसाओ!"

दूसरा फ़ोटो :
"मिले न जब तक ढेर मिठाई,
क्यों न रूठूं, तुम्हीं बताओ!"

प्रेषक : श्री सत्यस्वरूप दत्त, मार्फ़त असिस्टेंट केमिस्ट, ४८ थापर नगर, मेरठ।

'मगन खुशी में नाच रहा है,
बच्चों का प्यारा संसार'! —'संचिता'

उत्तरी ध्रुव - दीपोत्सव

दीपावली का प्रारम्भ कैसे हुआ ? हम उस उत्सव को क्यों मना रहे हैं ? दीपावली का पहिला दिन नरकचतुर्दशी है। हम यह जानते हैं कि उस दिन कृष्ण ने नरकासुर को मारा था। इस वजह से ही दीपावली मनाई जाती है, ऐसा कई का कहना है। कुछ का कहना है कि दीपावली के दिन वामनावतार में, भगवान ने बलि सम्राट को पाताल में भेजा था। दीपावली के दिन ही राम का पट्टाभिषेक हुआ था, यह भी कई विद्वानों का मत है। पर ऐसा प्रतीत होता है कि इसका एक और कारण भी है।

हमारे पूर्वज हजारों वर्ष पहिले उत्तरी ध्रुव में रहा करते थे, यह निरूपित करने के लिए वेदों में कई प्रमाण हैं। हो सकता है कि उत्तरी ध्रुव को ही स्वर्ग कहा जाता हो। वेदों में कहा गया है कि देव लोक का एक दिन मानव लोक में एक वर्ष के समान है।

भूगोल में हमें बताया गया है कि उत्तरी ध्रुव में वर्ष में एक ही रात्री और एक ही दिन होता है। उत्तरी ध्रुव के दिन को दीर्घ दिन कहते हैं और रात को दीर्घ रात्री।

यह इस तरह क्यों होता है, हम यहाँ जानने का प्रयत्न करेंगे ! वर्ष में केवल दो दिन ही सूर्य ठीक भूमध्य रेखा पर होता है—मार्च २२, सितम्बर २२ को। उत्तरायण में, सूर्य भूमध्य रेखा से १६०० मील दूर, छः महीने रहता है। उसी प्रकार दक्षिणायन में, सूर्य उसी दूरी पर दक्षिण में रहता है।

सितम्बर २२ के बाद ही उत्तरी ध्रुव में दीर्घ रात्री आरम्भ होती है।

जब हमारे पूर्वज इस प्रदेश में रहा करते थे, उनको यह रात्री भयंकर लगती थी। उस दीर्घ रात्री में वे कोई काम न कर पाते थे। पुण्यात्मा भी उस रात में नहीं मर पाते थे। उस रात के शुरू होते ही वहाँ के लोग दिये जलाने शुरू कर देते थे।

दिये के बगैर पितर भी अपना रास्ता न देख पाते थे।

उस समय उत्तरी ध्रुव के निवासियों की संख्या बहुत कम थी। यह शायद विचित्र ही है कि आज हम उनकी सभ्यता की प्रशंसा करते हैं। क़रीब क़रीब सभी भारतीय दीपोत्सव मनाते हैं। कई तो कार्तिक मास में रोज़ रात भर दिये जलाते हैं। वे कभी कभी ऊँची ऊँची जगह उन्हें रखते हैं, ताकि दूर के यात्रियों को प्रकाश दीख सके। यद्यपि दियों को जलाने की परम्परा उत्तरी ध्रुव में शुरू हुई थी, तो भी पटाके आदि जलाने की परिपाटी बाद में ही प्रारम्भ हुई। शायद पटाके जलाने की रस्म, चीन से आई है।

कई दीपावली का सम्बन्ध विक्रमादित्य से भी जोड़ते हैं। दो हज़ार वर्ष, इन्होंने उत्तर भारत का परिपालन किया था। वे अब भी भारतीय साहित्य में, कई कथाओं के नायक के रूप में अमर हैं। कई भारतीयों के लिए दीपावली नव वर्षोत्सव है।

कुछ भी हो दीपावली भारतीयों के लिए एक मुख्य त्यौहार है। यह त्यौहार जनता के मन में नई स्फूर्ति ही पैदा नहीं करता है, बल्कि भिन्न प्रान्तों को, भिन्न जातियों को एक सूत्र में बाँधता है।

टोप में से ताश के पत्ते

ताश के पत्ते को टोप में से निकाल देने का खेल बहुत दिलचस्प है। मैं इसको बहुत दिनों से सफलतापूर्वक करता आया हूं। इस जादू में एक पत्ता, मान लीजिये, जेक आफ़ स्पेड्स, दर्शकों के सामने, धीमे धीमे, टोप के अन्दर ऊपर की ओर ढकेला जाता है और अन्त में सारा का सारा पत्ता टोप में से बाहर आ जाता है। यह जरूरी है कि दर्शकों के निरीक्षण के लिए टोप अच्छी तरह दिखाया जाय, ताकि उनके मन में यह सन्देह न रह जाय कि टोप में छेद है।

इस जादू के लिए एक ऐसे टोप की जरूरत है जिसे टोप हेट या ओपेरा हेट कहा जाता है। क्योंकि ऊपर से यह चपटा और चिकना होता है। टोप का रंग काला होना चाहिये। जादूगर 'जेक आफ़ स्पेड्स' का पत्ता लेता है और उसको चार बराबर टुकड़ों में ऊपर से काट देता है। यानि, A. B. C. D. फिर वह उनको एक मेज़ पर रख देता है और उन पर रेशम का कपड़ा चिपका देता है। यह कपड़ा वही होना चाहिये, जो कि टोप का है। सूखने पर इसके चारों ओर के किनारों को अच्छी तरह काट लिया जाता है। तब इनके किनारों को काला कर दिया जाता है, ताकि टोप के ऊपर रखने पर वे पहिचाने न जा सकें। साथ

के खाके से यह बात पाठकों को अच्छी तरह मालूम हो सकेगी।

शुरू से ही 'जेक आफ स्पेड्स' को उलटा करके टोप पर रख दिया जाता है। तब ताश के पत्ते लाये जाते हैं, और उनमें से सचमुच 'जेक आफ स्पेड्स' चुन लिया जाता है। इसको तब टोप के लिए, अत्यन्त आवश्यक और महत्वपूर्ण है। हर धक्के के साथ टोप के ऊपर से क्रमशः A. B. C. D. के टुकड़े जादूगर उठाता जाता है, जैसा कि चित्र में दिखाया गया है।

अगर यह जादू ठीक तरह किया जाय तो दर्शक समझेंगे कि पत्ता
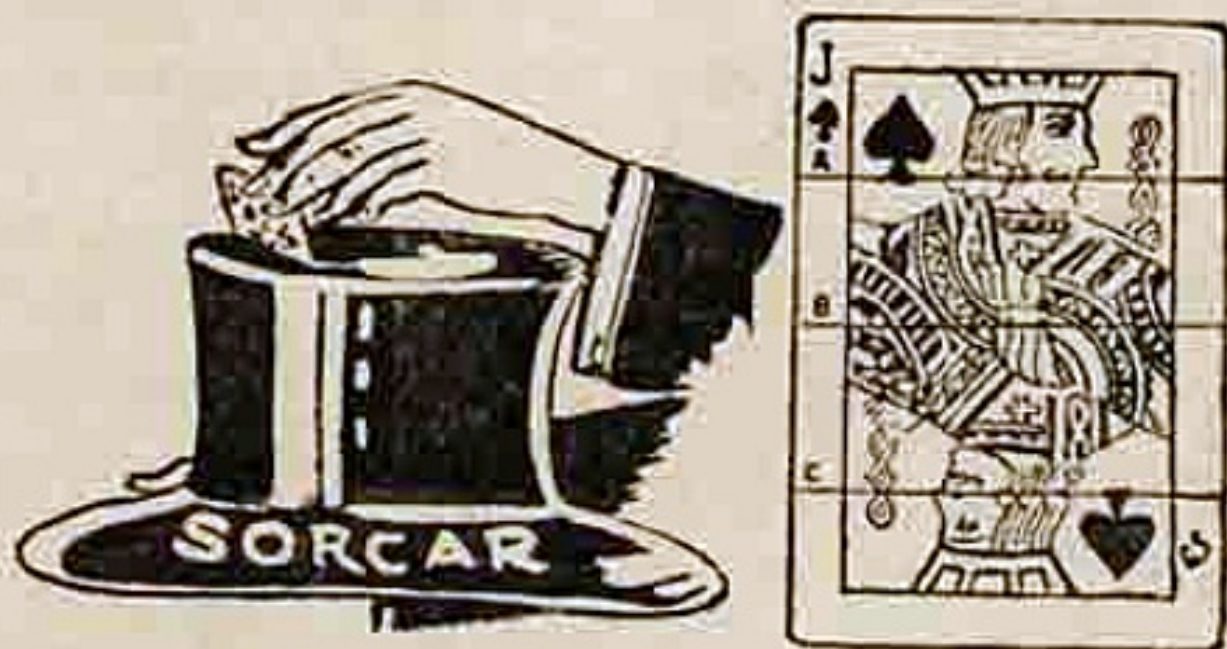
में ले जाया जाता है, और उसके अन्दर की तहों में इसको छुपा दिया जाता है। तब जादूगर यह दिखाता है, मानों पत्ते को वह ऊपर की ओर ढकेल रहा हो। ऐसा करना बहुत जरूरी है।

यहां यह स्मरण रहे कि प्रदर्शन और प्रस्तुतीकरण, एक सफल जादूगर टोप के अन्दर से ही आ रहा है। जब पूरा पत्ता बाहर आ जाता है तो जादूगर उसे दिखाता है और मेज़ पर फेंक देता है। फिर वह तुरन्त अगला जादू शुरू कर देता है ताकि दर्शकों को टोप में से निकले पत्ते की जांच-पड़ताल का मौका न मिले।

समाचार वगैरह

समाचार पत्रों से मालूम हुआ कि अभी हाल ही में आस्ट्रेलिया के इलेन स्टेट स्कूल के दस छात्रों ने हमारे प्रधान मंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू के नाम एक पत्र भेजा था और उन्होंने इस पत्र का उत्तर यों दिया—'वयस्क जन, बच्चों से बहुत कुछ सीख सकते हैं। मैंने विश्व के सभी क्षेत्रों में देखा है कि सब जगहों के बच्चों की पसन्दगी और नापसन्दगी एक-सी होती है। जैसे जैसे ये बड़े होते हैं, वैसे वैसे उनमें अन्तर आता जाता है।'

इधर जबलपुर में आवारा बच्चों को सन्मार्ग पर लाने के उद्देश्य से पुलिस ने ऐसे कुछ बच्चों को बूट पालिश, ब्रुश आदि चीजें देकर जीविका कमाने की तरफ़ प्रेरित किया है। कहा जाता है कि नगर के पुलिस सुपरिंटेंडेण्ट प्रति दिन उन बच्चों को अपने यहां बुलाकर बुरे काम न करने की शिक्षा देते रहे हैं।

* * *

भारत सरकार ने इस वर्ष देश में मेट्रिक्युलेशन के उपरान्त अध्ययन के लिए 'कुशाग्र किन्तु गरीब' छात्रों

को योग्यता छात्रवृत्तियां देने का निश्चय किया है। ये छात्रवृत्तियां विश्व-विद्यालयों या तांत्रिक और व्यावसाय शिक्षा के छात्रों को दी जायेंगी।

* * *

समाचार पत्रों से ज्ञात होता है कि हैदराबाद बाल संरक्षण समाज ने हैदराबाद और सिकन्दराबाद में ७ से १५ वर्ष की उम्र के लगभग २४ हजार बालकों को अवैध और अनाथ बालक मानकर उनकी सूची तैयार की है। ये अवांछित बालक सम्मान परिवारों में पूरे समय के नौकर थे। इनमें ८०० बालकों को विद्यालयों में भर्ती कर उन्हें हस्त कला कौशल की शिक्षा दिलायी जाएगी, ताकि वे अपराधी वृत्तियों की ओर न बढ़ें।

हाथरस तहसील के एक गांव में एक महिला है, जिसके ३४ बच्चे हैं। आश्चर्य की बात तो यह है कि उक्त महिला ने १७ बार जुड़वां बच्चों को जन्म दिया है। १८ वर्ष की अवधि में उसने ३४ बालकों को जन्म दिया है। सब बालक जीवित हैं। उनमें लड़कों की संख्या ही अधिक है।

* * *

अमेरिका की लौकहीड एअर क्राफ्ट कम्पनी के इंजनीयरों ने संसार के सबसे छोटे टेलिविज़न कैमरे का निर्माण किया है। यह कैमरा मोटाई में १.३/४ इंच, लम्बाई ५ इंच और चौड़ाई में २ इंच है। इससे विमान चालकों और इंजनीयरों को फौरन ही उन हिस्सों के कार्यों के बारे में पता चल जाता है, जिन्हें वे देख नहीं सकते।

चित्र - कथा

एक दिन शाम को दास और वास अपने पालतू कबूतर को लेकर गाँव के बाहर नाले के पास गये। साथ में टाइगर भी था। कबूतर को आसमान में उड़ाकर वे तमाशा देख ही रहे थे कि पेड़ की आड़ में छिपे हुए नटखट रामू ने कबूतर को मारने के लिए निशाना ठीक किया। तब टाइगर दौड़कर उसके पास गया और उसका पैर पकड़ लिया। रामू का निशाना चूककर नाले से पानी लानेवाली एक औरत के मिट्टी के बर्तन को लगा, जो उसके सिर पर था। नटखट रामू भाग गया। फिर दास और वास भी टाइगर के साथ नौ-दो ग्यारह हो गये!

Printed by B. NAGI REDDI at the B.N.K. Press (Private) Ltd., and Published by him for Chandamama Publications, from Madras 26—Controlling Editor: SRI 'CHAKRAPANI'

Chandamama, Nov. '56

Photo by J. V. Sivarama Sastry

पुरस्कृत परिचयोक्ति

"मिले न अब तक ढेर मिठाई,
क्यों न रूठूं, तुम्हीं बताओ !"

प्रेषक :
श्री राम [illegible] दत्त, मेरठ

जंगल में मंगल !